अंक 5 -भाग -2

वर्ष - 2025

लहरें

भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान
एला, ओल्ड गोवा 403 402, गोवा (भारत)

लहरें
2024

INDIAN DAIRY ASSOCIATION (WEST ZONE)
Department of Animal Husbandry & Department of Cooperation

हिन्दी कार्यशाला

अंक 5 -भाग -2 वर्ष- 2025

वार्षिक हिंदी पत्रिका

लहरें

भाकृअनुप - केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान
एला, ओल्ड गोवा 403402 गोवा (भारत)

भाकृअनुप - केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान
एला, ओल्ड गोवा 403402 गोवा (भारत)
आई . एस. ओ. प्रमाणित संगठन

संपादक मंडल

आतिल अमन, श्रेया बर्वे, विनोद उबरहंडे एवं प्रवीण कुमार

तकनीकी सहयोग

प्रांजलि वाडेकर

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, तार्किकता एवं सत्यता हेतु लेखकगण उत्तरदायी हैं।

प्रकाशन एवं सम्पर्क सूत्र

निदेशक
भाकृअनुप - केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान
फोन : 0832- 2995095
ई:मेल-**director.ccari@gmail.com**

भाकृअनुप - केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान
एला, ओल्ड गोवा 403402 गोवा (भारत)
आई . एस. ओ. प्रमाणित संगठन

डॉ. प्रवीण कुमार
निदेशक

निदेशक का संदेश

भारत का तटीय पारिस्थितिक क्षेत्र अपनी विविधता, उत्पादकता और संवेदनशीलता के कारण अत्यंत विशिष्ट महत्व रखता है। यह क्षेत्र देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 10 प्रतिशत भाग है, जो 9 राज्यों एवं 2 केंद्र शासित प्रदेशों में फैला हुआ है। लगभग 11,099 किलोमीटर लंबी तटीय रेखा के साथ यह क्षेत्र न केवल भौतिक विविधता का भंडार है, बल्कि कृषि, पशुपालनएवं मत्स्य उत्पादन के रूप में विशाल उत्पादन क्षमता भी रखता है। यह क्षेत्र देश का लगभग 16 प्रतिशत कृषियोग्य भूमि और पशुपालन क्षेत्र का 19.5 प्रतिशत भाग समेटे हुए है।

तटीय पारिस्थितिकी तंत्र पर चक्रवात, लवणता, बाढ़, समुद्री जलवायु, शहरीकरण, प्रदूषण, आवासीय दबाव तथा संसाधनों के अत्यधिक दोहन जैसे प्राकृतिक एवं मानवजनित कारकों का गहरा प्रभाव पड़ता है। इन चुनौतियों के बीच कृषि उत्पादकता को बनाए रखना एवं बढ़ाना एक सतत प्रयास का विषय है।

ऐसे परिप्रेक्ष्य में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधीनस्थ केन्द्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान (ICAR–CCARI) तटीय कृषि के सतत, समावेशी एवं जलवायु-सहिष्णु विकास के लिए एक अग्रणी भूमिका निभा रहा है। संस्थान द्वारा जलवायु-सहिष्णु फसलों एवं पशु प्रजातियों का विकास, संसाधन-दक्ष समन्वित खेती प्रणाली, किसान-केंद्रित एवं पारिस्थितिकीय रूप से अनुकूल तकनीकों का प्रसार, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन, पशुधन एवं मत्स्य प्रबंधन, तथा तटीय व्यावसायिक फसलों एवं कृषि-पर्यटन-उद्यमिता को प्रोत्साहन देने हेतु विविध पहलें की जा रही हैं।

संस्थान के अनुसंधान परिणामों एवं तकनीकी उपलब्धियों को नीति-निर्माताओं, कृषकों, वैज्ञानिकों एवं अन्य हितधारकों तक सरल भाषा में पहुँचाने के उद्देश्य से यह वैज्ञानिक संकलन हिंदी में तैयार किया गया है।

इस श्रृंखला में "लहरें" का "पाँचवाँ अंक (भाग-2)" आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत गर्व और प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है। यह संकलन तटीय कृषि क्षेत्र से संबंधित प्रासंगिक अनुसंधान, नवीन तकनीकों एवं अनुभवों को साझा करने का एक सार्थक प्रयास है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह प्रकाशन तटीय पारिस्थितिकी क्षेत्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा और सतत कृषि के क्षेत्र में हमारे सामूहिक प्रयासों को नई दिशा प्रदान करेगा।

इस अंक के सभी लेखकों, संपादकों एवं सहयोगियों के प्रति मैं हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ तथा भविष्य के लिए शुभकामनाएँ देता हूँ।

(प्रवीण कुमार)

भाकृअनुप - केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान
एला, ओल्ड गोवा 403402 गोवा (भारत)
आई . एस. ओ. प्रमाणित संगठन

संपादकीय

भाकृअनु-केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वार्षिक हिंदी पत्रिका 'लहरें' के पाँचवे अंक -भाग 2 को आपके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए हमें बहुत खुशी हो रहीं है। हमें आशा है कि यह सभी हितधारकों को उपयोगी सिद्ध होगा। इस अंक के लिए सहयोग प्रदान करने वाले सभी लेखकों, वैज्ञानिकों, तकनीकी , प्रशासनिक एवं अन्य कर्मचारियों को सहृदय अभिनंदन। इस अंक के लिए प्राप्त आपकी प्रक्रियाएं हमें आगामी अंकों को उत्तम बनाने में मददगार सिद्ध होगा।

धन्यवाद।

संपादक मंडल

अनुक्रमणिका

तकनीकी खंड		
क्रं. सं.	आलेख	पृष्ट सं .
1.	चारे की फसलों में खरपतवार प्रबंधन पारस कम्बोज, सुकीर्ति, रूही, पूजा गुप्ता सोनी, कन्नौज और रवीश पंचटा	02
2.	मवेशियों में विषाणु जनित प्रमुख रोग: रोकथाम एवं नियंत्रण श्याम सिंह दहिया और शिरीष नरनावरे	07
3.	गोवा में धान की खेती का महत्व राहुल कुमार और विश्वजीत प्रजापति	11
4.	गोवा में काली मिर्च की खेती की संभावनाएं श्रीपद भट्ट, परमेश वी और उथप्पा ए आर	16
5.	पशुओ में होने वाले सामान्य प्रजननरोग व उनका उपचार अतुल कुमार सचान, लाल सिंह गंगवार, कामिनी सिंह एवं आलोक कुमार	18
6.	मेड़ पर मक्का रोपण (रिज विधि):जलभरावाले खेतों में मक्का उत्पादन हेतु टिकाऊ समाधान मनीष कुशवाहा, रूही, पूजा गुप्ता सोनी, कन्नौज ,पारस कम्बोज ,सुकीर्ति और कृष्ण कुमार	23
7.	मधुमक्खियाँ और वन: पारिस्थितिकी संतुलन के संरक्षक उथप्पा ए आर, शिशिरा डी,संग्राम चव्हाण, बोम्मयासामी एन, श्रीपाद भट्ट और राहुल कुमार	29
8.	चिंता का विषयः भोजन में छिपे कीटनाशक मृणालिनी प्रेरणा	34
9.	माइक्रोग्रीन्स: पोषण का छोटा पॉवरहाउस उमर इलरॉय उर्सुला डी सूजा	36

साहित्यिक खंड		
1.	उनके जाने का गम विश्वजीत प्रजापती	39
2.	“बचपन के खयाल - अनसुलझे खयाल” वैशाली धाँगड़ा	40
3.	भारत का संविधान, भारत की आत्मा आतिल अमन	42
4.	कार्यालयों में राजभाषा हिंदी: एआई (AI) और आईटी (IT) उपकरणों की भूमिका विनोद आनंदा उबरहंडे, श्रेया बर्वे और आतिल अमन	46

तकनीकी खंड

चारे की फसलों में खरपतवार प्रबंधन

पारस कम्बोज, सुकीर्ति, रूही, पूजा गुप्ता सोनी, कन्नौज और रवीश पंचटा
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्व विद्यालय, हिसार, भारत- 125004

पशुओं के लिए हरे चारे की फसलें बहुत उपयोगी हैं।ये फसलें पशुओं को संतुलित आहार देने के लिए आवश्यक हैं क्योंकि इनमें विटामिन, खनिज, प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट जैसे आवश्यक पोषकतत्व भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। दुधारू पशुओं को हरा चारा देने से पशुओं में दूध उत्पादन बढ़ता हैं। जैसे-जैसे विश्व की जनसंख्या बढ़ती जा रही है और पशु उत्पादों की माँग बढ़ती जा रही है, चारे की फसलें और भी महत्वपूर्ण होती जा रही हैं। भारत में, पशुधन कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और देश के सकल घरेलू उत्पाद में 4.1% का योगदान देता है। यद्यपि भारत विश्व के कुल भू-भाग का केवल 2.4% ही है, फिर भी 20वीं पशुधन गणना के अनुसार, यह पशुधन की सबसे बड़ी आबादी को बनाए रखने में दुनिया में अग्रणी हैं।

मवेशियों की कम उत्पादकता का एक मुख्य कारण पर्याप्त चारे का अभाव है। इन पशुओं की पोषण संबंधी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए ज्वार, मक्का, बाजरा और अन्य चारे वाली फसलें उगाई जाती हैं। पशुधन उत्पादकता, दूध उत्पादन और गुणवत्ता, मांस उत्पादन और सामान्य पशु स्वास्थ्य, चारे की उपलब्धता व गुणवत्ता के साथ जुड़े हैं। बरसीम, लोबिया और ल्यूसर्न अन्य चारे वाली फसलें हैं जो चारे के साथ मिट्टी की गुणवत्ता को बनायें रखने में भी सहायक हैं। इसके साथ-साथ विभिन्न घास जैसी चारा फसलें मुख्य रूप से पशुओं के चारे के लिए उगाई जाती हैं। इन फसलों को उनकी उच्च पोषक, स्वादिष्टता और विविध पर्यावरणीय परिस्थितियों में उगने की क्षमता के कारण चुना जाता है।

भारत में हरा चारा 8.4 मिलियन हेक्टेयर में उगाया जाता हैं।भारत में वर्तमान में क्रमशः 35.6%, 11.0% और 44.0% हरे चारे, सूखे चारे और कुल चारे की कमी है। हरे चारे की उत्पादकता विभिन्न कृषि पद्धितयों के अलावा खेत में मौजूद खरपतवारों पर निर्भर करती हैं। चारा फसलों में खरपतवार संक्रमण से बायोमास उत्पादन में महत्वपूर्ण गिरावट आती है और चारे की गुणवत्ता प्रभावित होती है। चूंकि चारा फसलों को त्वरित वनस्पति विकास और उच्च बायोमास के लिए उगाया जाता है, इसलिए उत्पादकता को अनुकूलित करने के लिए समय पर खरपतवार प्रबंधन महत्वपूर्ण हैं। अवधि के प्रारंभिक चरण के दौरान खरपतवार पोषक तत्वों, नमी, प्रकाश और स्थान के लिए फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं, इस प्रकार फसल की पूर्ण उपज क्षमता प्राप्त करने के लिए बुआई के बाद शुरुआती 35 से 40 दिनों तक फसल की वृद्धि अवधि को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए। हरे चारे और बीज की पैदावार बढ़ाने के लिए खरपतवारों का नियंत्रण करना बहुत जरूरी हैं। लेपिडियमडिडिमियम जैसे खरपतवार जब पशु आहार के साथ मिला हो और इस मिश्रण को पशुओं को खिलाने से दूध में दुर्गंध आती हैं और

इसके दूध की गुणवत्ता खराब हो जाती हैं। आम तौर पर फसलकी पैदावार में कुल नुकसान का एक तिहाई तक खरपतवारों द्वारा किया जाता हैं। चारा फसलों में शुरुआती चरण में खरपतवार नियंत्रण बेहतर स्थापना के लिए महत्वपूर्ण है। इसलिए हमें फ़सल को खरपतवारों मुक्त रखना चाहिए।

खरपतवारों के कारण होने वाले नुकसान: कृषि में खरपतवार एक बड़ी चुनौती हैं, जो भारी आर्थिक नुकसान पहुँचाते हैं और चारे वाली फसलों सहित फसलों की उत्पादकता और गुणवत्ता को कम करते हैं। इसके अलावा, शाकनाशी-प्रतिरोधी खरपतवारों के प्रबंधन से जुड़ी लागत काफी अधिक हो सकती है, जिससे किसानों पर वित्तीय बोझ बढ़ जाता है। हालाँकि चारे वाली फसलें कम प्रभावित होती हैं, लेकिन अनाज वाली फसलों की तुलना में चारा फसलें खरपतवार के खतरे से कम प्रभावित होती हैं क्योंकि वे अधिक सघन रूप से उगाई जाती हैं। यहाँ तक कि गर्मियों और खरीफ मौसम की प्रमुख चारा फसल जैसे ज्वार, खरपतवार नियंत्रण के अभाव में भारी नुकसान उठाती है और चारा ज्वार की उत्पादकता में 33% की कमी आती है। किसानों के खेतों पर किए गए 72 परीक्षणों से बाजरे की उपज में 27.6% की कमी दर्ज की गई। खरपतवार न केवल चारे की गुणवत्ता को खराब करते हैं, बल्कि दोमट मिट्टी में बरसीम की ताजा चारे की उपज को 23-30 प्रतिशत तक कम कर देते हैं और इसके बीज की उपज को 50 प्रतिशत तक कम कर देते हैं।

चारे की उपज: चारे की खेती में, खरपतवार पोषक तत्वों, पानी, प्रकाश और स्थान जैसे आवश्यक संसाधनों के लिए मुख्य फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे चारे की उपज और गुणवत्ता कम हो जाती है। खरपतवार चारे की फसल को प्रभावित करने वाले कीटों और कीड़ों के लिए मेजबान के रूप में भी काम करते हैं और अप्रत्यक्ष रूप से कटी हुई चारे की फसल की गुणवत्ता और बाजार मूल्य को कम करते हैं। अध्ययनों से पता चला है कि पूरे मौसम में खरपतवार का संक्रमण और फसल के साथ प्रतिस्पर्धा चारे की फसल की पैदावार को काफी कम कर सकती है, जो खरपतवार के प्रकार और संक्रमण के स्तर पर निर्भर करता है। खरपतवारों से होने वाले नुकसान मौसम, फसल और किस्म के साथ अलग-अलग होते हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि चारा फसलों के बाजार मूल्य में 1% की कमी होती है यदि खेत में 1% खरपतवार आबादी हो या यदि खरपतवार के बीज को कटी हुई फसल के साथ मिला दिया जाए। चारा मक्का में, खरपतवारों को वैश्विक स्तर पर 37% उपज में कमी के लिए ज़िम्मेदार माना जाता है। खरपतवार प्रतिस्पर्धा के कारण चारे की उपज में नुकसान ल्यूसर्न में 11.7% और जई में 8.3% तक बताया गया है। ज्वार जैसी फसल में, उपज में 54% तक की कमी देखी गई। बरसीम में, खरपतवार वनस्पतियों के कारण हरे चारे की उपज में 23 से 28% और बीज की उपज में 38 से 44% तक की कमी का अनुमान लगाया गया है।

चारे की गुणवत्ता: खरपतवार न केवल चारे की मात्रा को कम करते हैं बल्कि इसकी गुणवत्ता पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। चारे की फसलों में खरपतवारों की उपस्थिति काटे गए चारे के पोषण मूल्य को कम कर सकती है, जिससे यह पशुओं के लिए कम स्वादिष्ट और पौष्टिक हो जाता है। मोथा और जंगली सरसों (सिनापिस आर्वेन्सिस) जैसे खरपतवारों में अल्फाल्फा और घास जैसी उच्च गुणवत्ता वाली चारा फसलों की तुलना में कम पाचनशक्ति और पोषण सामग्री होती है। जब ये डेयरी गायों द्वारा खाए जाते हैं तो ये दूध का स्वाद भी बदल सकते हैं या भेड़ के ऊन में फंसने पर ये ऊन की गुणवत्ता को कम कर सकते हैं। सेलोसिया अर्जेन्टिया ने खरपतवार को चारा ज्वार के साथ सफलतापूर्वक प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम बनाया सेलोसिया अर्जेन्टिया ने कटाई के काम में बाधा डाली और हरे चारे वाले ज्वार की गुणवत्ता को कम कर दिया क्योंकि खरपतवार कटी हुई चारा ज्वार में मिल गया। खरपतवारों के कारण उपयोग की जाने वाली सामग्री की दक्षता और गुणवत्ता में काफी कमी आती है।

ज्वार में खरपतवार का प्रकोप

मक्का में खरपतवार का प्रकोप

बरसीम में खरपतवार का प्रकोप

ग्वार में खरपतवार का प्रकोप

खरपतवारों का पशुधन और मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव कुछ खरपतवारों के संपर्क में आने से मनुष्यों और पशुओं को त्वचा संबंधी एलर्जी पैदा हो जाती हैं। कुछ खरपतवार (सेनेसियो जैकोबेआ,टेरिडियम एक्विलिनम) जहरीले भी होते है जिनको खाने से पशु मर भी जाते हैं। इसलिए चारे की फसलों को खरपतवार मुक्त रखना बहुत जरूरी हैं ताकि पशुओं को पोषिक चारा मिलें।

तालिका: चारे की फ़सल में आने वाले मुख्य खरपतवार

फ़सल	उसमे आने वाले मुख्य खरपतवार
खरीफ़ की चारे वाली फसले (मक्का, जवार, बाजरा, ग्वार, लोबिया आदि)	घास जाति वाले खरपतवार: ब्राचीरिया रेमोज़, एलुसीन इंडिका, इचिनोक्लोआ कोलोना, डिजिटेरिया सेंगुइनालिस चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार: अमरैन्थस विरिडिस, कोकिनिया ग्रैंडिस, क्लियोम विस्कोसा, सेलोसिया अर्जेंटीया, कोकिनिया ग्रैंडिस, क्लियोम विस्कोसा,
रबी की चारे वाली फसलें (बरसीम, जई)	घास जाति वाले खरपतवार: पोआ एनुआ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार: कोरोनोपस डिडिमस, रुमेक्स डेंटेटस, सिचोरियम इंटीबस

चारे की फसलों में खरपतवार नियंत्रण कई तरीकों से किया जा सकता हैं इनमें से तरीक़े इस लेख में नीचे बताएं गए हैं।

साफ बीज का प्रयोग करें: फ़सल के बीज के साथ अन्य बीजों (खरपतवार के बीजों) का मिश्रण खरपतवारों के फैलने का मुख्य कारण हैं। साफ़ बीज का प्रयोग करके खरपतवारों की समस्या को काफ़ी हद तक कम किया जा सकता हैं। बिजाई करने से पहले फसल के बीज को 10% नमक के घोल में डाल दें जिसके हलके बीज़ ऊपर आ जाएंगे। इन बीजों को निकाल दें। आम तौर पर खरपतवारों के बीज भी हल्के होते हैं को पानी में ऊपर आ जाते हैं। इसके बाद बचे हुए बीजों को साफ़ पानी से अच्छे से साफ़ कर लें ताकि उससे नमक अच्छे से साफ़ हो।

उचित बिजाई का तरीका अपनाकर: सीडड्रिल का उपयोग करके फसल की पंक्ति में बुआई करने व एकसमान बीज की गहराई रखने में मदद मिलती है जिसके परिणामस्वरुप पौधों की संख्या एक समान होती है। इस तरीके से बुआई करने से बीज उत्पादन करने के लिए सिफारिश की जाती है इसमें अंतर पंक्ति जुताई करने में आसानी रहती है। जिससे की फ़सल में आसानी से खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता हैं। फ़सल की उचित गहराई और पंक्ति में बुआई के लिए विभिन्न संस्थानों द्वारा कई सीड ड्रिल विकसित की गई है।

निवारक व स्थानीय तकनीकों द्वारा प्रबंधन: निवारक तरीकों को अपनाकर फसल में खरपतवारों का प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सकता है। फसल की कटाई के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई खरपतवार घनत्व को कम करने का बहुत प्रभावी तरीका है। स्वच्छ बीजों के उपयोग और स्थानीय तरीकों जैसे कि बुआई का समय और विधि, फसल चक्र, पोषक तत्व, उर्वरक डालने की विधि और समय, सिंचाई का समय और विधि इत्यादि फसल में खरपतवार को कम करने में बहुत आवश्यक है।

जई में हाथ से निराई

ग्वार में हाथ से निराई

रासायनिक तरीको से खरपतवार नियंत्रण:

बाजरे की बिजाई के तुरंत बाद एट्राजिन 50 % का 500 ग्राम शुद्ध भाग 450 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करने से खरपतवारों का अच्छा नियंत्रण किया जा सकता हैं। जई में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए 2, 4-D का 500 ग्राम शुद्ध भाग बिजाई से 30-35 दिन बाद छिडकाव करने से अच्छा खरपतवार नियंत्रण पाया जा सकता है | एकीकृत प्रबंधन जिसमे अलग अलग तरीको को अपनाकर अच्छा एवं पर्यावरण अनुकूल खरपतवार नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है| अंत: खरपतवारों का एकीकृत प्रबंधन ही सबसे अच्छा तरीका होता है |

भारतीय भाषाएं नदियां है और हिंदी महानदी - रवींद्र नाथ ठाकुर

मवेशियों में विषाणु जनित प्रमुख रोग: रोकथाम एवं नियंत्रण

श्याम सिंह दहिया[1],वरिष्ठ वैज्ञानिक व शिरीष नरनावरे[2], वरिष्ठ वैज्ञानिक

1. भा.कृ.अनु.प.- राष्ट्रीय खुरपका मुँहपका रोग संस्थान
अरुगुल , भुवनेश्वर, उड़ीसा
2. भा.कृ.अनु.प.- केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान
ओल्ड गोवा , गोवा

प्राचीन काल से मनुष्य ने पशुपालन को अपनाया है। पशुपालन का मुख्य उद्देश्य सुरक्षा, यातायात व भोजन, विशेष रूप से शिकार के दुर्लभ दिनों में, खाने की आपूर्ति सुनिश्चित करना रहा है। हमारे देश में गाय-भैसों की संख्या १२५.३४ मिलियन हैं और दूध-उत्पादन १७६.३ मिलियन टन हैं। वैश्विक मानक स्तर पर भारत में प्रति पशु दूध-उत्पादन कम होने के प्रमुख कारणों में से बीमारी एक महत्वपूर्ण कारण हैं। पशु-पालकों को अपने जानवरों के स्वास्थ्य की देखभाल एवं अधिकतम उत्पादन प्राप्ति के लिए उन्हें होने वाली कुछ महत्वपूर्ण विषाणु-जनित बिमारियों की जानकारी रखना अत्यंत आवश्यक हैं। अतः इस लेख में मवेशियों को होने वाली विषाणु-जनित बिमारियों के सम्बन्ध में जानकारी प्रस्तुत है।

१. खुरपका एवं मुहपका रोग (एफ़.एम्.डी.):

यह रोग एफ़.एम्.डी. विषाणु से होने वाला अत्यधिक संक्रामक रोग है। पुरे भारत में यह एक स्थानीक रोग हैं। यह रोग मुख्य रूप से तीन सिरोटाइप- "ओ", "ए" व "एशिया-१" विषाणु से होता हैं जिसमे सिरोटाइप- "ओ", प्रमुख हैं। पशुओं की उत्पादकता व अंतर्राष्ट्रीय पशु-व्यापार की दृष्टि से यह रोग अत्यंत महत्वपूर्ण है। संक्रमित पशु का श्वसन-तंत्र इस रोग के संक्रमण का मुख्य माध्यम है। हालाँकि संक्रमित चारा, पानी, पशु-उत्पाद तथा मनुष्य द्वारा भी यह रोग स्वस्थ पशु तक फ़ैल सकता है। इस रोग के प्रमुख लक्षण हैं: तेज़ बुखार (१०४-१०५ फारेनहाईट), मुहं से गाढ़ा लार टपकना, जीभ, मसूड़ों, खुर, थूथन पर छाले, चारा खाना छोड़ना, लंगड़ा कर चलना, दूध-उत्पादन क्षमता में कमी, बछड़ों का दूध ना पीना व असामान्य परिस्थितियों में मौत।

गोपशु की जीभ पर खुरपका एवं मुहपका रोग के छाले

2. अल्पकालिक ज्वर (एफिमरल फीवर): यह एक कीट-जनित एफेमरो विषाणु से होने वाला रोग है जो कि प्रायः वर्षा ऋतू में होता है। इस रोग का संचरण प्राथमिक रूप से क्यूलिकोइड मच्छरों द्वारा होता हैं। इस रोग से प्रभावित पशुओं में लक्षण: अचानक बुखार (१०५-१०६ फारेनहाइट), आख व नाक से स्राव , लार टपकना, चारा ना खाना, गर्भपात, उत्पादकता में कमी और नर पशु की प्रजनन क्षमता में कमी। सामान्यतः पशु, चिकित्सा के अभाव में भी, तीन दिन बाद स्वस्थ हो जाता हैं।

3. संक्रामक गोवंश नासा श्वास प्रणालशोथ (आई.बी.आर.):

यह एक हर्पिस विषाणु से होने वाला अति संक्रामक रोग हैं। संक्रमित पशु व दूषित सामग्री, शुक्राणु व प्राकृतिक गर्भाधान विधि के माध्यम से स्वस्थ पशु में इस रोग का संक्रमण हो सकता है।

इस रोग के मुख्य लक्षण: तेज़ बुखार (तकरीबन १०६° फारेनहाईट), चारा ना खाना, आख व नाक से स्राव, उत्पादकता में कमी, गर्भपात, बाँझपन, नरो में: कामेच्छा की कमी, लिंगमुंड व उसके आवरण में सुजन।

4. गोपशु विषाणु-जनित दस्त (बोवाइन वायरल डायरिया) :

यह पेस्टीविषाणु द्वारा फैलने वाला अति-संक्रामक रोग हैं। इस रोग के लिए ६ महीने से २ साल तक के पशु ज्यादा संवेदनशील रहते है। इस रोग के विषाणु संक्रमित पशु के सभी स्रावों में मौजूद होते है, जोकि स्वस्थ पशु को संक्रमित करने में सहायक हो सकते है, इसके अलावा, दूषित चारा व सामग्री से भी यह रोग संक्रमित हो सकता हैं।

इस रोग से ग्रसित पशु में लक्षण: तेज़ बुखार (तकरीबन १०६ फारेनहाईट), चारा ना खाना, संक्रमित मादा द्वारा रोगग्रसित बछड़े का जन्म, गर्भपात, आँख-नाक से स्राव, बदबूदार खुनी दस्त, उत्पादकता में कमी, अत्यधिक कमजोरी व उचित देखभाल के भाव में मृत्यु।

5. मस्सा: (पैपिलोमा)

यह रोग गोवंशीय मस्सा विषाणु से होता हैं। इस रोग के लिए ६ महीने से २ साल तक के पशु ज्यादा संवेदनशील रहते है। यह रोग संक्रमित पशु, मनुष्य, सामग्री व कीट द्वारा स्वस्थ पशु को प्रभावित कर सकता हैं। वैसे तो मस्सा पशु के शरीर पर कहीं भी हो सकता है, लेकिन, प्रायः आखों के चारो ओर, सिर, गर्दन, कंधे, पिछले पैरों इत्यादि की त्वचा पर मस्सा हो सकता हैं। नए मस्सों के क्षतिग्रस्त होने से उनमें रक्तस्राव हो सकता है। अत्यंत पुराने होने पर मस्से स्वतः ही टूट कर गिर जाते हैं और त्वचा पर क्षत-चिन्ह शेष रह जाते है।

गोपशु के मुंह के आसपास मस्से

६. लम्पी स्किन डिजिज:

यह रोग लम्पी स्किन डिजीज वायरस के द्वारा होता है। लंपी स्किन डिज़ीज़ के लक्षण: बुखार, लार, आंखों और नाक से स्रवण, वजन घटना, दूध उत्पादन में गिरावट, पूरे शरीर पर कुछ या कई कठोर और दर्दनाक गांठे दिखाई देते हैं। त्वचा के घाव कई दिनों या महीनों तक बने रह सकते हैं। क्षेत्रीय लिम्फ नोड् सूज जाते हैं और कभी-कभी एडिमा उदर और ब्रिस्केट क्षेत्रों के आसपास विकसित हो सकती है। कुछ मामलों में यह नर और मादा में लंगड़ापन, निमोनिया, गर्भपात और बाँझपन का कारण बन सकता है।

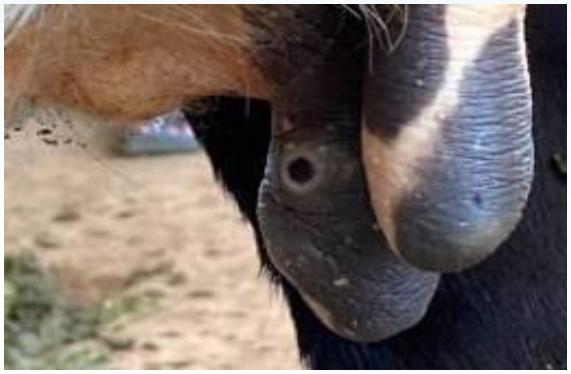

लम्पी त्वचा रोग में गोपशु के शरीर के बिभिन्न भागों में आई गांठे

रोकथाम एवं नियंत्रण :

मवेशियों में उपरोक्त वर्णित विषाणु जनित रोगों के प्रति-विषाणु दवाओं का प्रचलन सामान्यतः नहीं है। अतः पशुपालकों को टीकाकरण व बचाव-पद्धति द्वारा ही अपने पशुओं का बचाव करना चाहिए :

1. यदि रोग के लिए टीका उपलब्ध है तो निर्देशित प्रक्रिया द्वारा अपने पशु को नियमित टीका लगवाना चाहिए।
2. रोग की शंका होते ही सबसे पहले अपने क्षेत्र के पशुधन सहायक या पशु-चिकित्सक को सूचित करना चाहिए व उनके परामर्शनुसार रोगी पशु के उपचार के साथ स्वस्थ पशु का टीकाकरण करवाना चाहिये।
3. रोगग्रस्त पशु का रख-रखाव (चारा-पानी, स्थान, देख-भाल करने वाला व्यक्ति)

स्वस्थ पशुओं से अलग व दूर करना चाहिए।

4. किसी भी नए पशु को तुरंत पुराने पशुओं के साथ नहीं रखना चाहिए।
5. संक्रमित क्षेत्र व पशु की जानकारी होने पर, स्वस्थ पशुओं को उनसे दूर रखना चाहिए।
6. बीमार पशु की मृत्यु की अवस्था में, विधिपूर्वक उसकी सामग्री जैसे बिछोना इत्यादि पशु के साथ जला दें या चूने के साथ ४-५ फुट गड्ढे में गाड़ देना चाहिए।
7. मृत पशु के बाड़े को फिनायेल से धो कर चूने का छिडकाव करने के बाद ही स्वस्थ पशु को उसमें रखना चाहिए।
8. पशु के बाड़े में मच्छरों, मक्खियों और जूँ के नियंत्रण के उपाय करने चाहिए।

टीकाकरण:सारणी-

क्रम सं.	रोग	प्रथम टीके की उम्र	बूस्टर टीका (पहले टीके के बाद)	अगला टीका
१.	खुरपका एवं मुहपका रोग	४ महीने या ज्यादा	एक महीने	प्रति ६ महीने
२.	संक्रामक गोवंश नासा श्वास प्रणालशोथ	३ महीने या ज्यादा	एक महीने	प्रति वर्ष
३.	गोपशु विषाणुजनित दस्त-	६ महीने या ज्यादा	निर्माता के निर्देशानुसार	
४.	मस्सा	४ महीने या ज्यादा	एक महीने	प्रति वर्ष
५.	लम्पी स्किन डिजीज	३ से ६ महीने के बीच	निर्माता के निर्देशानुसार	प्रति वर्ष

गोवा में धान की खेती का महत्व

राहुल कुमार एवं विश्वजीत प्रजापति
भा.कृ.अनु.प.- केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान
ओल्ड गोवा , गोवा

परिचय:

गोवा भारत का एक तटीय राज्य है जहाँ अधिकतर किसान खरीफ मौसम में वर्षा पर निर्भर होकर धान की खेती करते हैं। यहाँ धान मुख्यतः जुलाई से अक्टूबर के बीच उगाया जाता है। गोवा की उपजाऊ, जलोढ़ व लैटेराइट मिट्टी, और मानसून की प्रचुर वर्षा इसे धान के लिए उपयुक्त बनाती है।

नर्सरी प्रबंधन क्यों जरूरी है?

धान की नर्सरी खेती की नींव होती है। एक अच्छी तरह से तैयार की गई नर्सरी से प्राप्त स्वस्थ पौधें रोपाई के बाद तेजी से बढ़ती हैं और अच्छी उपज देती हैं। गोवा जैसे राज्य में, जहाँ जमीन सीमित है और मानसून छोटी अवधि का होता है, वहाँ समय पर नर्सरी तैयार करना अत्यंत आवश्यक होता है।

गोवा की कृषि जलवायु:

औसत वर्षा:	2500–3000 मिमी
तापमान:	25°C – 35°C
प्रमुख धान किस्में:	ज्योति, करजत, जया, गोमती, IR-64, और स्थानीय किस्में जैसे कोरगुट, अंबे मोहर

नर्सरी के लिए स्थान और मिट्टी का चयन

स्थान का चयन:

- खेत समतल और जलनिकासी युक्त होना चाहिए
- पास में पानी की उपलब्धता हो
- मुख्य खेत के पास हो ताकि पौध आसानी से रोपित की जा सके

मिट्टी का चयन:

गोवा में लैटेराइट मिट्टी अधिक पाई जाती है, लेकिन नदी किनारे की जलोढ़ मिट्टी नर्सरी के लिए सर्वोत्तम होती है।

- मिट्टी में जैविक पदार्थ (organic matter) होना चाहिए
- pH 6.0–7.5 के बीच होना उचित है

भूमि की तैयारी:

- खेत को 2-3 बार जुताई करें

- FYM (गोबर की खाद) या कंपोस्ट डालें– 5 टन/हेक्टेयर
- छोटे-छोटे बेड (3m x 1.5m) बनाएं
- बेड्स के बीच में नालियाँ रखें ताकि पानी निकासी हो सके

बीज चयन, उपचार एवं बुवाई

बीज का चयन:

- प्रमाणित किस्में जैसे ज्योति, करजत-3, जया
- रोग प्रतिरोधक, उच्च उत्पादक किस्में चुनें
- स्थानीय जलवायु के अनुसार ही किस्मों का चयन करें

बीज उपचार:

1. **नमक समाधान द्वारा चयन:**
   - 1 लीटर पानी + 30 ग्राम नमक मिलाकर बीज डालें
   - तैरते हुए बीज निकाल दें (वे खराब होते हैं)
2. **फफूंदनाशक से उपचार:**
   - कार्बेन्डाजिम या थायरम (2.5 ग्राम/किलो बीज)
3. **जैविक उपचार:**
   - बीजामृत या ट्राइकोडर्मा से उपचार

बुवाई की विधि:

- **समय:** सामान्यतः जून के तीसरे सप्ताह से जुलाई की शुरुआत तक
- **अंकुरण:** बीजों को 12 घंटे भिगोकर फिर बोरे में रखकर अंकुरित करें
- **बुवाई:**
  - अंकुरित बीजों को गीली मिट्टी पर बिखेरें (wet bed method)
  - प्रति बेड ~ 500 ग्राम बीज पर्याप्त

Image courtesy :https://www.indiamart.com/

नर्सरी की देखभाल और पौध की वृद्धि

सिंचाई:

- मानसून की शुरुआत में वर्षा पर निर्भर करें
- आवश्यकतानुसार सिंचाई करें, परंतु जलभराव न होने दें

खरपतवार प्रबंधन:

- नर्सरी में खरपतवार निकलने पर हाथ से निराई करें
- आवश्यकता होने पर पेंडिमिथालिन जैसे शाकनाशकों का प्रयोग

रोग एवं कीट नियंत्रण:

- **धान की झुलसा (Blast):** कार्बेन्डाजिम का छिड़काव
- **कीट:** जैसे कि तना छेदक, लीफ फोल्डर – नीम आधारित कीटनाशक या ट्राइकोडर्मा जैसे जैविक नियंत्रण अपनाएं

खाद प्रबंधन:

- 1 किग्रा नाइट्रोजन (Urea) प्रति 100 वर्गमीटर क्षेत्रफल पर
- जैविक खाद और गोमूत्र आधारित छिड़काव से भी अच्छे परिणाम मिलते हैं।

उखाड़ने की विधि:

- नर्सरी में पानी भर दें ताकि मिट्टी नरम हो जाए
- पौध को ध्यानपूर्वक जड़ों के साथ उखाड़ें
- जड़ों को क्षति न पहुँचाएं

पौध की उखड़ाई और रोपाई की तैयारी

पौध की स्थिति:

- 20–25 दिनों की उम्र वाले पौधे रोपाई के लिए उपयुक्त माने जाते है
- पौधे की ऊँचाई 4–6 इंच होनी चाहिए जड़ें मजबूत और सफेद रंग की हों

मुख्य खेत की तैयारी:

- दो बार जुताई + समतलीकरण
- खादों का मिश्रण (FYM, सुपर फॉस्फेट, यूरिया, पोटाश)
- खंडों में जल नियंत्रण के लिए मेंड़ बनाएं

रोपाई की विधि:

- 2-3 पौध प्रति स्थान
- कतार से कतार दूरी: 20 सेमी, पौधे से पौधे की दूरी: 15 सेमी
- अधिक रोशनी और वायु संचार के लिए समुचित दूरी

निष्कर्ष:

गोवा में धान की खेती पारंपरिक और सांस्कृतिक दोनों रूपों में महत्वपूर्ण है। यदि किसान नर्सरी प्रबंधन के वैज्ञानिक तरीकों को अपनाएं - जैसे कि उन्नत बीज, जैविक खाद, और समय पर देखभाल - तो उपज में 20–30% तक की वृद्धि संभव है। इसके साथ ही लागत में भी कमी आती है।

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है, जिनके बाल पर वह विश्व वी साहित्यिक भाषा की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है। - मैथिलीशरण गुप्त

गोवा में काली मिर्च की खेती की संभावनाएं

श्रीपद भट्ट, परमेश वी एवं उथप्पा ए आर

भा.कृ.अनु.प.- केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान, ओल्ड गोवा , गोवा

काली मिर्च को काला सोना और मसालों का राजा कहा जाता है। काली मिर्च दुनिया में सबसे अधिक कारोबार वाले मसालों में से एक है। विश्व में वियतनाम, ब्राजील, इंडोनेशिया और भारत प्रमुख काली मिर्च उत्पादक देश हैं। काली मिर्च की उत्पत्ति भारत के पश्चिमी घाट क्षेत्र में हुई। काली मिर्च सहित मसाले यूरोपीय लोगों द्वारा भारत के लिए समुद्री मार्ग की खोज का कारण थे। गोवा सहित पश्चिमी तटीय क्षेत्र की जलवायु काली मिर्च की खेती के लिए अनुकूल है। सुपारी आधारित बहुमंजिला फसल प्रणाली, जिसे स्थानीय रूप से कुलागर के नाम से जाना जाता है, में काली मिर्च की बेलें पारंपरिक रूप से सुपारी और नारियल के पेड़ों पर उगाई जाती हैं।

2024-25 के आंकड़ों के अनुसार, भारत में काली मिर्च का क्षेत्रफल 2,54,000 हेक्टेयर और उत्पादन 79,000 टन है। इसमें कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। गोवा में काली मिर्च का क्षेत्रफल 850 हेक्टेयर है तथा उत्पादन 310 टन है। गोवा में सुपारी का क्षेत्रफल 2,080 हेक्टेयर तथा नारियल का क्षेत्रफल 26,780 हेक्टेयर है। इसलिए, गोवा में काली मिर्च के अंतर्गत क्षेत्र का विस्तार करने की गुंजाइश है। काली मिर्च की खेती से आय के स्रोतों में विविधता लाने में मदद मिलेगी। जून 2025 के दौरान गोवा में काली मिर्च की कीमत 688 रुपये प्रति किलोग्राम थी। यदि किसान एक ही बेल से एक से दो किलोग्राम काली मिर्च प्राप्त कर लें, तो उन्हें उतनी अतिरिक्त आय प्राप्त हो सकती है।

फाइटोफ्थोरा फफूंद के कारण होने वाला त्वरित विल्ट रोग एक गंभीर समस्या है। इस रोग के कारण प्रतिवर्ष लगभग 10% बेलें मर जाती हैं। बोर्डो मिश्रण का समय पर छिड़काव, जलभराव से बचाव, जड़ क्षेत्र को नुकसान से बचाना इस रोग के प्रबंधन के लिए कुछ महत्वपूर्ण प्रबंधन पद्धतियां हैं। उचित प्रबंधन रणनीतियों का पालन करके किसान इस रोग का सफलतापूर्वक प्रबंधन कर सकते हैं।

लोकप्रिय किस्में पन्नियुर-1 और थेवम हैं। काली मिर्च का आर्थिक जीवन लगभग 20 वर्ष है। काली मिर्च में पुष्प मानसून के मौसम में आते हैं और कटाई का समय जनवरी से मार्च तक होता है। आम तौर पर किसान दो प्रकार की उपज पैदा करते हैं: काली मिर्च और सफेद मिर्च। भारत में कोचीन, अलेप्पी, चिकमगलूर और सिरसी काली मिर्च के प्रमुख बाजार हैं। किसान काली मिर्च का 2 से 3 साल तक भंडारण कर सकते हैं और कीमतें अधिक होने पर बेच सकते हैं। मौजूदा पेड़ों का उपयोग करके काली मिर्च उगाकर किसान अतिरिक्त आय अर्जित कर सकते हैं। इन कारकों को ध्यान में रखते हुए, किसानों की आय बढ़ाने के लिए, गोवा में काली मिर्च के क्षेत्र विस्तार की आवश्यकता है।

पशुओ में होने वाले सामान्य प्रजननरोग व उनका उपचार

अतुल कुमार सचान, लाल सिंह गंगवार, कामिनी सिंह एवं आलोक कुमार
भाकृअनुप - भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारतवर्ष में प्रक्षेत्र पशुओं की संख्या लगभग 48.2 करोड़ है जिसमें गाय तथा भैंसों की संख्या क्रमषः 18.7 एवं 9.4 करोड़ है। दूध उत्पादन की दृष्टि से विश्व में भारत का प्रथम स्थान है। यह सर्वविदित है कि गाय एवं भैंस ही दुग्ध उत्पादन के मुख्य जानवर है। पशुधन के विकास में केन्द्र तथा राज्य सरकारों की विभिन्न परियोजनाओं से दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में सकारात्मक नतीजे तो मिले है, परन्तु उनके साथ ही साथ विभिन्न प्रकार की स्वास्थ्य सम्बन्धित समस्यायें भी उत्पन्न हुई है, जिसमें प्रजनन सम्बन्धी रोग या बंध्यता एक प्रमुख कारण है। सामान्यतः बंध्यता का अर्थ है कि गर्भधारण क्षमता का क्षीण होना या अस्थाई रूप से सन्तान न उत्पन्न कर पाना। वैज्ञानिक आधार पर भैंस की पड़िया 24 व बछिया 14 महीनें में प्रजनन योग्य हो जानी चाहिये एवं क्रमश: 35 व 25 महीने के उम्र में ब्याना चाहिये। दो ब्यात की बीच की अवधि 12 से 13 महीने गायों में एवं 15-16 महीने भैंसों में होनी चाहिये, लेकिन प्रजनन की समस्याओं के कारण इस समयावधि में देरी हो जाती है। जिससे हमारे पशुपालकों को अत्यधिक आर्थिक हानि होती है। इस लेख में पशु प्रजनन अंगों के रोग व उनके उपचार के बारे में प्रकाश डाला गया है।

1. अनुवांशिकी प्रजनन संबंधी रोग:

इसके अन्तर्गत मुख्यतः जन्मजात, प्रजनन तंत्र की अंगों की विकृतियाँ आती है। जन्म से ही पशुओं में जनन अंगों का पूर्ण रूप से विकसित न होना या अनुपस्थित होना मुख्य अनुवांशिक प्रजनन विकृतियाँ हैं। ऐसे पशु कभी भी गर्भधारण नहीं करते है। इस तरह के विकार जानवरों में प्रजनन अवरोध उत्पन्न करते हैं एवं उन्हें बांझ बना देते है। ऐसे बांझ पशुओं का इलाज कठिन होता है। अतः इनको प्रजनन क्षेत्र से हटा देना चाहिये। इस प्रकार अनावश्यक जीन के संचरण को भी रोका जा सकता है।

2. रोगाणुओं के संचरण संबंधी व्याधियाँ:

अण्डाशय में सूजन, सूजन के साथ-साथ अपने आसपास के अंगों में चिपक जाना मुख्यतः यह अण्डाशय के रोग ग्रस्त होने से, गलत ढंग से परीक्षण, स्पर्श अधिकाधिक दबाने, अण्डाशय में सिस्ट एवं कार्पस ल्यूटिम को निकालने का गलत प्रयास एवं कुछ रोगाणु संक्रमण आदि से होता है। इन सबसे जानवर में बांझपन आ जाता है। इस रोग को रोकने के लिये यह बहुत जरूरी है की अण्डाशय का परीक्षण बहुत सावधानी से करें।

3. अण्डाणु नलिका में विकार:

सामान्यतः यह रोग गायों एवं भैंसों में होता है। इसमें मुख्य है अण्डाणु नलिका में सूजन, सेलपिंजाइटिस, नलिका में पानी भर जाना (हाइड्रोसालपिंक्स) तथा नलिका में मवाद भर जाना (पायोसालपिंक्स)। ये सभी व्याधियां प्रजनन क्षमता को कम करने के लिये उत्तरदायी हैं। मुख्य रूप से ये रोग जीवाणुओं का योनि मार्ग में प्रवेश होने से होता है। ब्याने के बाद, या बच्चा गिराने, जेर रह जाने पर या सेप्टिक मेट्राइटिस आदि से तथा टी. बी. के रोगाणु से भी यह व्याधि हो सकती है। रोग की स्थिति में नलिका पतली हो जाती है तथा अन्य अंगों से चिपक भी सकती है। परीक्षण द्वारा विशेषज्ञ इन रोगों का निदान कर सकते हैं तथा विशेषज्ञ की सलाह से इसका इलाज संभव हैं। जानवर को इलाज के दौरान प्रजनन से आराम देना चाहिये।

बच्चेदानी की व्याधियाँ:

एंडोमेट्राइटिस, मेट्राइटिस, पायोमेट्रा, पेरीमेट्राइटिस एवं बच्चेदानी का कैंसर मुख्य रूप से बच्चेदानी की व्याधियाँ है। कई तरह के रोगाणु जैसे कि ट्राइकोमोनास, विब्रियो फीट्स, ब्रुसेल्ला अबोर्टस, कोराइनी, बैक्टीरियम पायोजनीस, ई. कोलाई, पाश्चुरेला, स्ट्रप्टोकोकस पायोजन्स इत्यादि, साथ-साथ माइकोप्लाजमा, विषाणु एवं कवक भी इन रोगों के लिये उत्तरदायी होते है। मेट्राइटिस एवं एंडोमेट्राइटिस मुख्य रूप से अबोर्शन, समय से पहले जन्म, डिस्टोकिया (बच्चा फस जाना), जेर रह जाना, बच्चेदानी में जोर लगाने की क्षमता का ह्रास तथा बच्चेदानी में चोट आदि लगने के परिणाम स्वरूप होते हैं। कृत्रिम गर्भाधान तथा सांड़ से गर्भाधान के दौरान संक्रमित वीर्य एवं संक्रमित वातावरण से भी इन बीमारियों को होने की संभावनाएं बनी रहती है। इन रोगों का निदान गर्भाधारण एवं ब्यानें संबंधी जानकारी एवं रोग के लक्षण आदि देखकर किया जा सकता है। इस रोग में म्यूकस के साथ मवाद योनिमार्ग से स्त्रावित होने लगता है। प्रारंभिक समय में कुछ मवाद के छिछड़े म्यूकस` के साथ देखे जा सकते है। जानवर के गर्मी में आने की अवधि प्रायः कभी-कभी एंडोमेट्राइटिस या प्रारंभिक भ्रूण मृत्यु के कारण अनियमित एवं अधिक हो सकती है। यदि इसका समय पर निदान कर लिया जाये तो रोग ठीक होने की ज्यादा संभावना रहती है। इलाज के लिये एंटीबायोटिक्स बच्चेदानी में डालकर तथा साथ-साथ इसके इंजेक्शन लगाये जाते है। यह सब काम केवल विशेषज्ञ की राय से ही करना चाहिये। अन्यथा इसके बुरे परिणाम भी हो सकते है। कुछ गर्भाशय की प्रतिरक्षा क्षमता को बढ़ाने वाली दवाईया भी इसके इलाज में लाभकारी हैं जैसे कि लाइपोपालीसैकेराइड (एलपीएस) एवं लियामिजॉल। पायोमेट्रा का ठीक से इलाज न होने से पेरीमेट्राइटिस एवं पैरा मेट्राइटिस रोग हो सकते है। जो कि बहुत खतरनाक होते हैं और इनका इलाज करना भी बहुत ही कठिन होता है। तथा इससे जानवर बांझ भी हो सकता है।

सर्विसाइटिस (ग्रीवा का भाग की सूजन):

मुख्यरूप से यह व्याधि पशुओं की जनन क्षमता को प्रभावित करती है। इसमें ग्रीवा सूज जाती

है। इसके बाहरी तहे (फोल्ड) योनि में प्रोलेप्स हो जाती है।

1. ल्यूगोल्स आयोडिन का लेप सरविक्स (ग्रीवा) की बाहरी सतह पर लगाकर।

2. एंटीबायोटिक्स का इंजेक्शन लगा कर तथा इसे बच्चेदानी में डालकर इसका इलाज किया जा सकता हैं।

3. जननांगों की क्रिया प्रणाली में अवरोध:

जानवर का गर्भ न होना, अंडाशय में कोष (सिस्ट) बन जाना, कार्पस ल्यूटियम का नष्ट न होना आदि मुख्य अंडाशय की व्याधियाँ हैं जो जनन क्षमता को प्रभावित करती हैं।

(अ) जानवर का गर्म न होना (एनईस्ट्रम):

यह प्रमुख बीमारी है जो पशुओं की प्रजनन क्षमता को कम करती है। जिसमें जानवर में गर्मी के बिल्कुल लक्षण नहीं आते। इसमें या अंडाशय की क्रिया प्रणाली में अवरोध होता है या पशु गर्मी के लक्षण प्रकट करने में असमर्थ होता है। अंडाशय, ल्यूटियल सिस्ट एवं कापर्स ल्युटियम के ज्यादा समय तक रह जाने पर जानवर गर्मी में नहीं आता, क्योंकि इन संरचनाओं के द्वारा प्रोजेस्टेरान हार्मोन श्रावित होता है। जोकि मस्तिष्क के हाइपोथैलेमो-हाइपोफाइसियल अक्ष पर क्रियाकर उससे गोनेडाट्रोफिन हार्मोन श्रावित होना बन्द कर देता है। सही मायने में अनईस्ट्रम बछियों में एवं दुधारू गायों में ब्याने के बाद देखा जाता है। बछियों में अंतःश्रावी ग्रंथियों एवं जनन अंगों के कम विकास के कारण होता है। अपर्याप्त पोषण, सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी, रख-रखाव में कमी, परजीवी इन्फैक्सन एवं वातावरणीय तनाव आदि के कारण जानवर के गर्मी में न आने की स्थिति पैदा होती है। प्रीमार्टिनिज्म, अंडाशय का क्षरण, जनन नलिका का कम विकास आदि सभी अनईस्ट्रम के कारण हैं।

अनईस्ट्रम सबसे ज्यादा दुधारू गायों एवं भैंसों में देखा गया है इसके मुख्य कारक है बछड़े को दूध पिलाना, पोषण की कमी, उर्जा का ह्रास होना, अधिक दुग्ध उत्पादन, गर्मी तथा अन्य वातावरणीय तनाव आदि वातावरणीय तनाव प्रायः गर्मी के मौसम में भैंसों में होता है जिससे अंडाशय की कार्यप्रणाली गड़बड़ा जाती है और जानवर गर्मी में नहीं आते हैं। ब्याने के बाद मस्तिष्क में स्थित पिट्यूटरी ग्रंथि, हाइपोथेलेमस के गोनोडोट्राफिन रिलीजिंग हार्मोन के प्रति अक्रियाशील हो जाता है। कभी-कभी गर्मी के लक्षण तीव्र नहीं होते या पशु की गर्मी की सही पहचान नहीं हो पाती। ऐसी अवस्था को शांत गर्मी या गूंगी हीट कहते हैं।

अंडाशय छोटा एवं निष्क्रिय होना, इसमें कार्पस ल्यूटियम का न होना, जानवर का गर्म न होना तथा रक्त प्लाज्मा में प्रोजेस्टेरान की मात्रा मालूम करके भी निदान किया जा सकता है। इसके लिये 8-10 दिनों के अंतर से दो रक्त नमूने लिये जाते है। अनईस्ट्रम में प्रोजेस्टरान की मात्रा न्यूनतम 0.5-1.0 एमजी/एमएल रक्त प्लाज्मा होती है।

जानवरों को गर्मी में लाने के लिये कई प्रकार के प्रयोजन उपयोग किये गये हैं। प्रोजेस्टरान या तो अकेले, या इस्ट्रोजन के साथ, जीएनआरएच, प्रोस्टाग्लांडिन एवं कुछ आयुर्वेदिक दवायें इस रोग

के उपचार में काफी कारगर साबित हुई है। अंडाशय एवं बच्चेदानी की मालिश तथा ल्यूगोल्स आयोडिन का लेप, ग्रीवा के बाहरी सतह पर लगाने से भी अच्छे परिणाम देखे गये हैं। उचित पोषण, रख-रखाव एवं वातावरणीय तनाव कम करके भी हम अनईस्ट्रम की रोक थाम कर सकते हैं।

(ब) अंडाशयी रसोली:

मुख्यरूप से यह समस्या दुधारू गायों के साथ देखी गयी है। यह रोग देशी गायों में कम (1-4 प्रतिशत) तथा विदेशी दुधारू गायों में (10-12 प्रतिशत) अधिक पाया जाता है। इसी तरह इस व्याधि की घटनायें भैंसों में गायों की तुलना में कम हैं। इसके अनुवांशिकी होने के प्रमाण भी हैं। सिस्ट मुख्यतः दो प्रकार की होती है। फॉलिक्युलर सिस्ट एवं ल्यूटियल सिस्ट। जब अंडाशय में 2.5 सेमी. व्यास से भी ज्यादा के पानी भरी संरचनाएं हो तब इसको सिसटिक ओव्हरी कहते हैं। यह अंडोत्सर्ग के न होने से उत्पन्न होती है। अंडाशय के फालिकाल जब अंडात्सर्ग न करें, या नष्ट न हों और कभी ज्यादा दिनों तक साबुत रह जाये तब यह एक सिस्ट का रूप धारण कर लेते है। जोकि अंडाशय की क्रियाप्रणाली पर बिपरीत प्रभाव डालते हैं। इस कारण पशु अनईस्ट्रम या बार-बार जल्दी-जल्दी गर्म होते हैं। पशु का बार-बार गर्म होना एवं अंडोत्सर्ग नहीं होना इसका मुख्य लक्षण हैं।

इस रोग का कारण पिट्यूटरी ग्रंथि से ल्यूटनाइजिंग हारमोन की कम मात्रा का स्रवण है। फालिक्युलर सिस्ट की दीवार पतली एवं दबाने पर दबती हैं । लेकिन ल्यूटियल सिस्ट में शरीर के प्रोजेस्टेरान की मात्रा, फालिक्युलर सिस्ट की तुलना में बहुत अधिक होती है और यह सिस्ट कठोर होती हैं।

इसका उपचार रसोली को हाथ से नष्ट करके किया जाता है। परन्तु यह बहुत घातक है, दोबारा होने की संभावना बनी रहती है। इसलिये इस विधि का अब प्रयोग उचित नहीं है। एचसीजी (ह्यूमन कोरियोनिक गोनेडोट्रोफिन) इन्जेक्शन 3000-5000 आई. यू. एवं जी. एन. आर. एच (गोनेडोट्राफिन रिलीजिंग हारमोन) 100-200 माइक्रोग्राम इन्जेक्शन मुख्य रूप से फालिक्युलर सिस्ट के लिये उपयोगी है। पी.जी.एफटू अल्फा 25 मिग्रा. इन्जेक्शन मुख्यतः ल्यूटियल सिस्ट के लिये कार्यकारी है।

4. पशुओं का बार-बार गर्मी में आना (रिपीट ब्रीडिंग):

पशुओं को बार-बार गर्मी में आना तथा स्वस्थ्य एवं प्रजनन योग्य नर पशु में गर्भधारण सही समय पर कराने पर भी मादा पशु द्वारा गर्भधारण न करने की स्थिति को रिपीट ब्रीडिंग कहते है। ऐसे पशुओं में सामान्यतः नियमित मदचक्र होता है। जननांगों से कोई मवाद नहीं आता है तथा पशु को तीन या इससे भी अधिक बार गर्भधारण कराने पर भी गर्भ नहीं ठहरता है। निषेचन प्रक्रिया का न होना या विलम्ब से होना तथा भ्रूण की शीघ्र मृत्यु हो जाना इसके दो प्रमुख कारण है। ऐसे पशु प्रत्येक 20-21 दिनों के अन्तराल पर गर्मी में आते हैं। विभिन्न प्रकार के हारमोन्स (जी.एन.आर.एच., एच.सीजी.)-1500-3000 आई.क्यू.) का प्रयोग गर्भाधान के समय करने से अण्डोत्सर्ग 24 घण्टे के भीतर हो

जाता है। विलम्ब अण्डोत्सर्ग की स्थिति में इन हारमोनों के प्रयोग साथ-साथ तथा ऐसे पशुओं में 12-24 घण्टे के अन्तराल पर दो बार गर्भधारण कराना भी काफी कारगर सिद्ध हुआ है। गर्भाशय में संक्रमण की स्थिति में विभिन्न प्रकार के प्रति जैविक पदार्थ (एण्टीबायोटिक्स एवं एंटीसेप्टीक) के इन्जेक्शन तथा अन्तः गर्भाशयी प्रयोग इस रोग के उपचार में अत्यधिक प्रभावी पाए गए है।

संक्रामक रोग:

विभिन्न प्रकार के संक्रामक रोग जैसे क्षयरोग, ब्रुसेल्लोसिस, आई.बी.आर.-आई.पी.बी. खुरपका-मुंहपका, विब्रियोसिस, ट्राइकोमोनियोसिस इत्यादि से भी प्रजनन सम्बन्धी व्याधियाँ उत्पन्न होती है। ऐसी बीमारियों का निदान एवं उपचार उनके द्वारा उत्पन्न लक्षणों पर निर्भर है। उपचार से बचाव अधिक कारगर है। इसलिये जिन बीमारियों के टीके उपलब्ध हों उन्हें समय से लगवाना चाहिये। इन बीमारियों से गर्भपात एवं प्रजनन सम्बन्धी रोग हो जाते है, जोकि बांझपन का कारण बनते हैं।

निज भाषा उन्नति अहै , सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा –ज्ञान के , मिटत न हिय को सूल ।। - भारतेन्दु हरिश्चंद्र

मेड़ पर मक्का रोपण (रिज विधि): जल भरावाले खेतों में मक्का उत्पादन हेतु टिकाऊ समाधान

मनीष कुशवाहा*[1], रूही[2], पूजा गुप्ता सोनी[2], कन्नौज[2], पारस कम्बोज[2], सुकीर्ति[2] और कृष्ण कुमार[3]

[1]आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश, भारत
[2]चैधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा, भारत
[3]भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान-कृषि विज्ञान केंद्र, गुरुग्राम, हरियाणा

परिचय

हरियाणा में मक्का लगभग 30,000 से 70,000 हेक्टेयर क्षेत्र फल में उगाया जाता है, जिसमें 20,000 से 70,000 टन का उत्पादन और 2.5-3.03 टन प्रति हेक्टेयर (2020-21 डेटा) की औसत उत्पादकता है। राज्य में मक्का की खेती तीनों मौसम जैसे खरीफ (बरसाती मक्का: जून-सितंबर), रबी (अक्टूबर-मार्च) और बसंत (फरवरी-मई) में सफलतापूर्वक की जाती है। भारत में ~ 83% मक्का खरीफ सीजन में उगाया जाता है, जो मानसून की बारिश के कारण जलभराव के प्रति अति संवेदनशील है। सिंचित रबी और वसंत मक्का की फसलों पर पर्यावरणीय परिस्थितियों का कम प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है; तथापि, उन्हें फलने-फूलने के लिए कुशल जल प्रबंधन पद्धतियों की आवश्यकता होती है। विश्वसनीय सिंचाई के कारण पूर्वी हरियाणा में बसंतकालीन मक्का तेजी से लोकप्रिय हो रहा है, जब कि खरीफ मक्का अभी भी प्रचलित है, लेकिन जलभराव की समस्या से ग्रस्त है।

मक्का 5.5-7.5 पीएच और उच्च कार्बनिक पदार्थ वाली अच्छी जल निकासी वाली दोमट या रेतीली मिट्टी में अच्छी तरह पनपता है। हरियाणा के कुछ इलाकों में भारी मृदा की उपस्थिति जल भराव के खतरे को बढ़ा देती है, जिसके कारण पौधों की जड़ों तक ऑक्सीजन की आपूर्ति कम हो जाती है, जो उनके विकास और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। इसके अलावा, जलभराव हरियाणा में मक्का की खेती के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती है, विशेष रूप से खरीफ के मौसम के दौरान, जब 70% से अधिक मक्का, वर्षा की स्थिति में विकसित होता है, तो यह भारी बारिश जलभराव के तनाव को बढ़ा देता है। रिजरोपण (मेड़ परबुवाई) हरियाणा में मक्का की खेती में जल भराव के तनाव को कम करने के लिए एक स्थायी समाधान है, विशेष रूप से खरीफ मौसम के दौरान जब भारी मानसून की बारिश और खराब रूप से सूखा मिट्टी महत्व पूर्ण चुनौतियों का सामना करती है। हरियाणा में लोकप्रिय संकरों में एचएम 4 (बेबीकॉर्न), HQPM 1 (गुणवत्ता प्रोटीन मक्का), और अन्य जैसे DHQPT- 9001 और PEHM श्रृंखला शामिल हैं जिन में से कुछ मध्यम जलभराव सहिष्णुता दिखाते हैं।

हरियाणा में पोल्ट्री, स्टार्च और इथेनॉल क्षेत्रों को समर्थन देने में मक्का महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, अनुमान है कि वर्ष 2030 तक इसकी मांग बढ़कर 43 मिलियन टन हो जाएगी। फसल विविधीकरण में धान के लिए इसे जल-बचत विकल्प के रूप में विपणन किया गया है, जिसमें धान से जुड़ी निरंतर बाढ़ के तुलना में केवल 3-4 हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है।

चित्र 1: रिज विधि से मक्का की बुवाई

मक्का पर जलभराव का प्रभाव

1. शारीरिक प्रभाव:

- **कम प्रकाश संश्लेषण:** जलभराव के कारण पत्तियों में क्लोरोफिल की मात्रा कम हो जाती है तथा रंध्र बंद हो जाते हैं और गैस विनिमय कम हो जाता है। इससे कार्बोहाइड्रेट का उत्पादन कम हो जाता है।
- **पोषकतत्व अवशोषण अवरोध:** जड़ों में ऑक्सीजन की कमी से पोषक तत्वों (जैसे, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम) का अवशोषण बाधित होता है, जिससे विकासअवरुद्ध हो जाता है।
- **जड़ों को नुकसान:** लंबे समय तक जल भराव से जड़ों में हाइ पोक्सिया या एनॉक्सिया होता है, जिससे जड़ों के ऊतकों को नुकसान पहुंचता है, जड़ों की वृद्धि कम हो जाती है, तथा पानी और पोषक तत्वों का परिवहन बाधित हो जाता है।
- **हार्मोनल परिवर्तन:** एथिलीन उत्पादन में वृद्धि और जिबरेलिनवसाइटोकाइनिन के स्तर में कमी पौधों की वृद्धि के नियमन को बाधित करती है, जिससे अक्सर पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं और जीर्णता उत्पन्न होती है।
- **ऑक्सीडेटिव तनाव**: जलभराव प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (ROS) के संचय को प्रेरित करता है, जिससे कोशिका झिल्लियों और प्रोटीन को नुकसान पहुँचता है।

2. वृद्धि और उपज पर प्रभाव:

- **प्रारंभिक वृद्धि अवस्थाएँ:** मक्का अंकुरण और वानस्पतिक अवस्थाओं (V1-V6) के दौरान सबसे अधिक संवेदनशील होता है। यहाँ तक कि 2-4 दिनों का जलभराव भी वृद्धिको 20-50% तक कम कर सकता है।
- **प्रजनन अवस्थाएँ:** फूल आने या दाना भरने के दौरान जलभराव से पराग की जीवन क्षमता, दाना जमना और दाने की गुणवत्ता कम हो जाती है, जिससे गंभीर मामलों में उपज में 66% तक की हानि होती है।
- **पौधे की ऊँचाई और बायोमास:** रुकी हुई वृद्धि और शुष्क पदार्थ का कम संचयन आम है, तनाव प्रतिक्रिया के रूप में अपस्थानिक जड़ निर्माण होता है।

हरियाणा में मक्का में जल भराव का दबाव

- **फिजियोलॉजिकल:** जलभराव जड़ों में ऑक्सीजन की कमी करता है, जिससे पोषक तत्वों (जैसे, नाइट्रोजन, पोटेशियम) का अवशोषण और प्रकाश संश्लेषण

- बाधित होता है। इससे एथिलीन का उत्पादन बढ़ता है, जिससे पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं और विकास अवरुद्ध हो जाता है।जड़ हाइपोक्सिया के कारण 2-4 दिनों के भीतर 20-50% तक विकास में कमी आ सकती है।
- **उपज में कमी:** अंकुरण या पुष्पन अवस्था के दौरान लंबे समय तक जलभराव (7 दिन से ज्यादा) से उपज में 25-66% तक की कमी आ सकती है। खरीफ मक्का की उत्पादकता (2.706 टन/हेक्टेयर) रबी मक्का (4.436 टन/हेक्टेयर) से कम है, जिसका एक कारण जलभराव का तनाव भी है।
- **आर्थिक प्रभाव:** उपज में कमी और उच्च लागत (जैसे, बीज, श्रम) लाभ प्रदता को कम करती हैं। उदाहरण के लिए, बसंत कालीन मक्का का लाभ-लागत अनुपात 1.29 है, लेकिन जलभराव शुद्ध लाभ (₹ 24,679/हेक्टेयर) को कम कर सकता है।

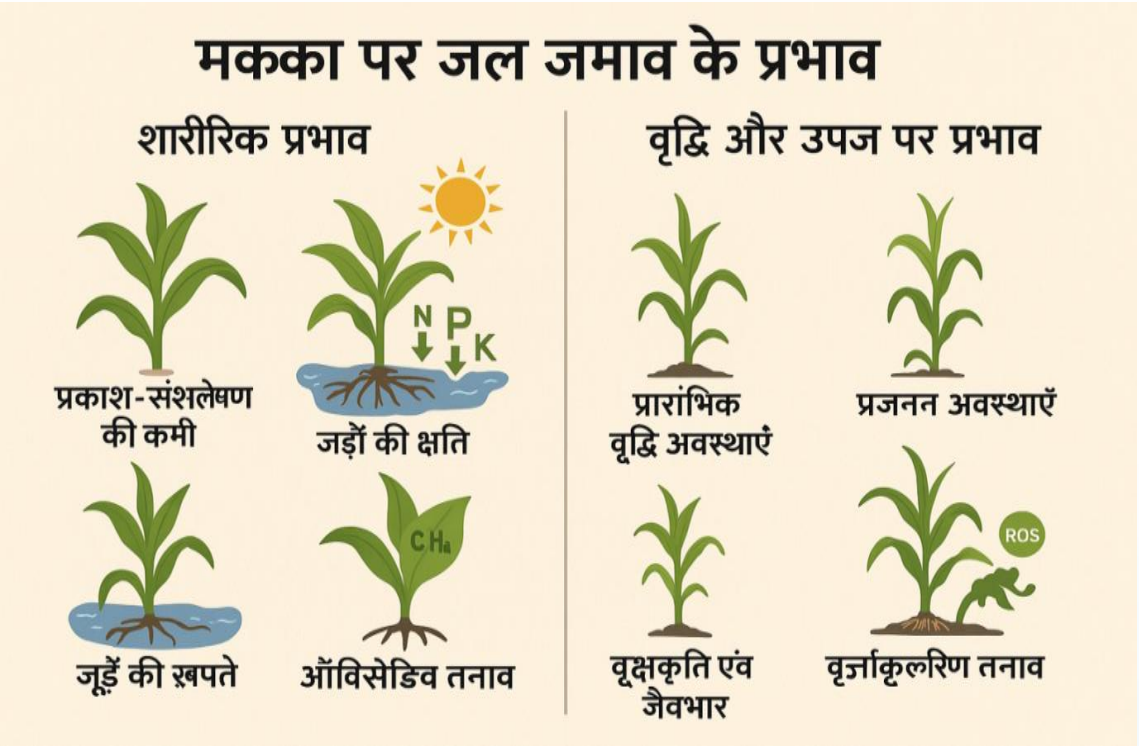

चित्र 2: मक्का पर जलभराव का प्रभाव

मक्का के लिए मेड़ों पर रोपण के लाभ

1. बेहतर जल निकासी और वायुसंचार:

- **प्रक्रिया:** मेड़ों पर रोपण में ऊँची मेड़ों (15-30 सेमी ऊँची) पर मक्का बोया जाता है, जिन के बीच में खांचे होते हैं, जिससे अतिरिक्त पानी जड़ क्षेत्र से बाहर निकल जाता है। इससे मिट्टी की संतृप्ति कम होती है और जड़ों के लिए ऑक्सीजन की उपलब्धता बनी रहती है, जो हरियाणा की भारी चिकनी मिट्टी और मानसूनी वर्षा (25-75 सेमी) के लिए महत्वपूर्ण है।
- **प्रभाव:** हाइपोक्सिया को रोकता है, जलभराव से उपज हानि को कम करता है (उदाहरण के लिए, अंकुरण या पुष्पन अवस्था में से ज्यादा दिनों के लिए जलभराव उपज में 25-66% की कमी होती है)। अध्ययनों से पता चलता है किसम तल बुवाई की तुलना में मेड़ों पर रोपण से जलभराव की स्थिति में उपज में 10-20% तक सुधार हो सकता है।

2. मृदा स्वास्थ्य और कटाव नियंत्रण:

- **स्थायित्व:** मेड़ें अपवाह को नियंत्रित कर के मृदा संघनन और कटाव को कम करती हैं, ऊपरी मृदा और कार्बनिक पदार्थों को संरक्षित करती हैं, जो मक्के की पोषक तत्वों की ज़रूरतों (जैसे, 120-150 किग्रा नाइट्रोजन/ हेक्टेयर) के लिए ज़रूरी हैं। यह हरियाणा में विशेषरूप से प्रासंगिक है, जहाँ भारी मृदाएँ पानी को रोककर रखती हैं और मानसून के दौरान कटाव करती हैं।
- **दीर्घ कालिक लाभ:** समय के साथ बेहतर मृदा संरचना मक्के की स्थायी गहनता को बढ़ावा देती है, जो हरियाणा द्वारा जल - गहन चावल से फसल विविधीकरण के प्रयासों के अनुरूप है।

3. जल और पोषकतत्व दक्षता:

- **जल प्रबंधन:** नालियाँ नियंत्रित सिंचाई (जैसे, वसंत मक्का के लिए ड्रिपसिस्टम) को सुगम बनाती हैं और अति-जलभराव के जोखिम को कम करती हैं, जिससे हरियाणा के घटते भूजल का संरक्षण होता है (कृषि योग्य भूमिका 75% सिंचित है)।
- **पोषकतत्व प्रतिधारण:** मेड़ें जड़ों के पास उर्वरक के प्रयोग को स्थानीय कृत करती हैं, जिससे भारी वर्षा के दौरान निक्षालन हानि कम होती है, जो जलभराव के दबाव में मक्का के पोषकतत्व अवशोषण (जैसे, नाइट्रोजन, पोटेशियम) को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है।

4. जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रतिअनुकूलन शीलता:

- **लचीलापन:** मेड़ों पर रोपण हरियाणा में अनियमित मानसून पैटर्न के प्रभाव को कम करता है, यह सुनिश्चित करता है कि मक्का न्यूनतम वृद्धि में कमी (समतल रोपण की तुलना में 20-50% कम क्षति) के साथ अल्पकालिक बाढ़ (2-4 दिन) का सामना कर सके।
- **जलवायु-स्मार्ट:** चावल जैसी अधिक पानी की खपतवाली फसलों पर निर्भरता

कम करके, मेरा पानी-मेरी विरासत (मक्का के लिए ₹7,000/ एकड़ सब्सिडी) जैसी योजनाओं के साथ तालमेल बिठाकर, हरियाणा के जलवायु-अनुकूल कृषि लक्ष्यों का समर्थन करता है।

आर्थिक व्यवहार्यता:

- **लागत-प्रभावशीलता:** मेड़ बनाने (मैन्युअल या मशीनीकृत) की प्रारंभिक लागत अधिक पैदावार और कम इनपुट नुकसान से कम हो जाती है। उदाहरण के लिए, हरियाणा में वसंत कालीन मक्का की उपजका लाभ-लागत अनुपात 1.29 है, जिसे मेड़ लगाने से जलभराव से होने वाले नुकसान को कम करके बढ़ाया जा सकता है।

- **मशीनीकरण:** हरियाणा में कस्टम हायरिंग सेंटर मेड़ बनाने के उपकरणों तक पहुँच प्रदान करते हैं, जिससे यह छोटे किसानों (औसत भूमि धारक ~1 हेक्टेयर) के लिए व्यवहार्य हो जाता

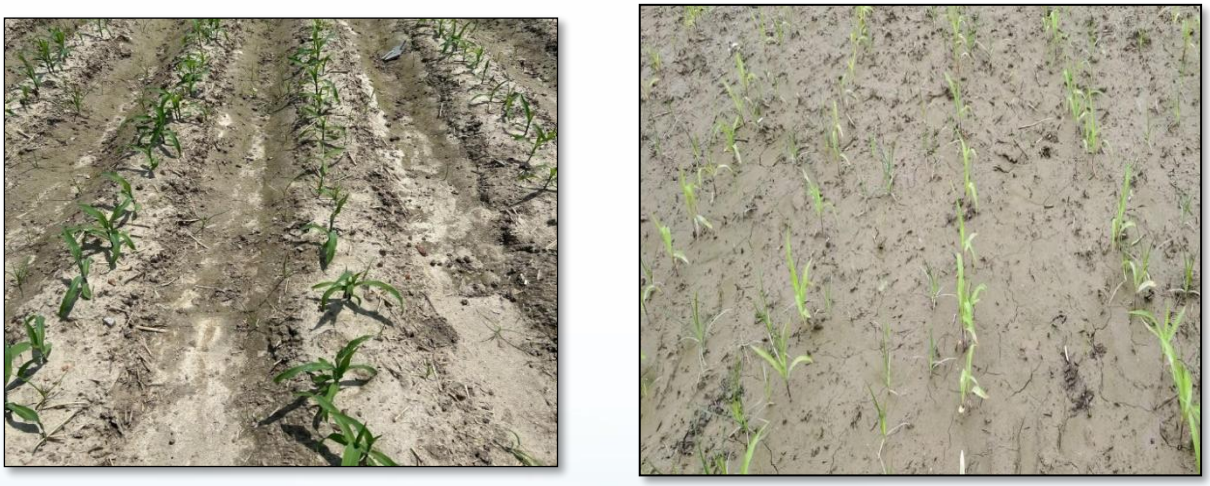

(क) **(ख)**

चित्र 3: जलभराव की स्थिति में मेड़ पर मक्का की बुवाई (क) एवं समतल बुवाई (ख) में फसल की स्थिति

चुनौतियाँ

- **प्रारंभिक निवेश**: मेड़ों की तैयारी के लिए श्रम या मशीनरी की आवश्यकता होती है, जो संसाधन-विहीन किसानों के लिए एक बाधा हो सकती है, जिनके पास सब्सिडी या मशीनीकरण तक पहुँच नहीं है।
- **मृदा विशिष्टता**: रेतीली मिट्टी (हरियाणा में कम प्रचलित) में कम प्रभावी, जहाँ पानी जल्दी निकल जाता है, इसलिए मिट्टी के प्रकार के आधार पर अनुकूलित अपना ने की आवश्यकता होती है।
- **रखरखाव**: भारी बारिश के दौरान मेड़ों को समतल होने से बचाने के लिए नियमित रखरखाव की आवश्यकता होती है, जिससे श्रम की आवश्यकता बढ़ जाती है।

निष्कर्ष

हरियाणा में मक्का में जलभराव की समस्या के लिए मेड़ों पर रोपण एक स्थायी समाधान है क्योंकि यह जल निकासी को बेहतर बनाने, मृदा स्वास्थ्य को संरक्षित करने और जल एवं पोषक तत्वों की दक्षता में सुधार करने की क्षमता रखता है। यह सब्सिडी और अनुसंधान द्वारा समर्थित, फसल विविधीकरण और जलवायु लचीलेपन के राज्य के लक्ष्यों के अनुरूप है। हालाँकि, इसे अपनाने के लिए प्रारंभिक लागतों को कम करने के लिए मशीनीकरण और जागरूकता तक पहुँच की आवश्यकता होती है। सर्वोत्तम परिणामों के लिए, सहनशील संकर, सटीक सिंचाई और मृदा प्रबंधन प्रथाओं को अपनाएँ।

मधुमक्खियाँ और वन: पारिस्थितिकी संतुलन के संरक्षक

उथप्पा ए आर[1], शिशिरा डी[2], संग्राम चव्हाण[3], बोम्मयासामी एन[2], श्रीपाद भट्ट[1], राहुल कुमार[2]

1. भा.कृ .अनु.प.- केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान, गोवा
2. भा.कृ .अनु.प.- कृषि विज्ञान केंद्र, उत्तर गोवा, गोवा
3. भा.कृ .अनु.प.-राष्ट्रीय अजैविक तनाव प्रबंधन संस्थान मालेगांव, बारामती, महाराष्ट्र

मधुमक्खियों का पालन केवल मधु का उत्पादन नहीं है; यह वानिकी में विशेष रूप से व्यापक लाभों के साथ एक महत्वपूर्ण अभ्यास है। जबकि दुनिया में मधुमक्खी की संख्या में कमी और पारिस्थितिक प्रभावों का सामना कर रही है, वन्यजीवन प्रबंधन के साथ मधुमक्खी पालन को मिलाकर एक दृढ़ समाधान के रूप में सामने आता है। हाल के वर्षों में, मधुमक्खी पालन विशेष रूप से वन्यजीवन के साथ इसके संबंध में महत्वपूर्ण ध्यान मिला है। वानिकी क्षेत्र के दिल में, जहाँ पर्णवाती दृश्य होते हैं, जहां प्राणियों का हमशक्ल वायु होता है, वहाँ मधुमक्खी पालन के लिए एक सुनहरा अवसर होता है। वानिकी क्षेत्र में मधुमक्खी पालन सिर्फ मधु के बारे में नहीं है; यह प्राकृतिक विविधता को संरक्षित रखने और प्रकृति की देन से लाभ उठाने के बीच एक नाजूक नृत्य है। यह लेख मधुमक्खी पालन और वानिकी के बीच के संबंध पर विचार करता है, उदाहरण देता है की गुच्छ के अभ्यास कैसे वनों के स्वास्थ्य में योगदान करते हैं जबकि मधुमक्खी आबादियों को भी लाभ पहुंचाते हैं।

मधुमक्खी वृक्ष संबंध-

- **मधुमक्खियों के लिए वन एक आदर्श आवास:** वन मधुमक्खियों के लिए एक महत्वपूर्ण निवास स्थान प्रदान करते हैं, जो मधुमक्खियों की आबादी और वन पारिस्थितिकी तंत्र की समग्र सेहत को बनाए रखने में सहायक होता है। वनों में फूलों के पौधों की समृद्ध विविधता होती है, जो साल भर अमृत और पराग की निरंतर और विविध आपूर्ति करती है। भोजन की यह सतत उपलब्धता मधुमक्खियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उन्हें अपने छत्तों या व्यक्तिगत घोंसलों को बनाए रखने और विभिन्न मौसमों में जीवित रहने में सक्षम बनाती है।
- भोजन के अतिरिक्त, वन मधुमक्खियों को उपयुक्त घोंसला बनाने के स्थान भी उपलब्ध कराते हैं। उदाहरण के लिए, शहद मधुमक्खियाँ अक्सर खोखले पेड़ों के तनों में अपना घोंसला बनाती हैं, जहां प्राकृतिक गुफाएं उनके छत्तों के लिए सुरक्षित स्थान प्रदान करती हैं। वहीं, अकेली रहने वाली मधुमक्खियाँ - जो समूह में नहीं रहती - मृत लकड़ी, पत्तों के कूड़े, या सीधे मिट्टी में अपना घर बनाती हैं। वनों की जटिल संरचना, जिसमें ऊंची छतरी, अंडरस्टोरी और जमीनी वनस्पति की परतें शामिल होती हैं, विभिन्न प्रकार की मधुमक्खियों के लिए कई प्रकार के छोटे-छोटे आवास (माइक्रोहैबिटेट) उपलब्ध कराती है।
- वनों के भीतर नदियाँ, झीलें और तालाब जैसे जल स्रोत भी मधुमक्खियों के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण होते हैं। मधुमक्खियाँ इन जल स्रोतों का

उपयोग अपने छत्तों के अंदर के तापमान को नियंत्रित करने और भोजन के लिए शहद को पतला करने के
लिए करती हैं। उष्णकटिबंधीय वनों में, जहां तापमान और नमी का स्तर अधिक स्थिर रहता है, मधुमक्खियों को एक अनुकूल वातावरण मिलता है, जो उनके सक्रिय रहने के लिए उपयुक्त है। यह स्थिरता वनों को मधुमक्खियों के लिए एक सुरक्षित आश्रय स्थल बनाती है, जहाँ वे अच्छे से पनप सकती हैं और साथ ही वनों के पौधों के परागण में योगदान करती हैं।

- मधुमक्खी और वृक्षों का यह संबंध परस्पर लाभकारी है; मधुमक्खियों को वनों से समृद्ध संसाधन मिलते हैं, जबकि वनों को परागण के लिए मधुमक्खियों की आवश्यकता होती है, जो वृक्षों के प्रजनन और जैव विविधता को बनाए रखने में सहायक होती हैं। यह संबंध वनों के पारिस्थितिकी संतुलन को बनाए रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और मधुमक्खियों के साथ-साथ उन पौधों की प्रजातियों के संरक्षण को भी सुनिश्चित करता है, जिन्हें वे परागित करती हैं।

- मधुमक्खियों का महत्वपूर्ण भूमिका है वन पारिस्थितिकी तंत्र में पोलिनेशन के माध्यम से, जो कई पौधों की प्रजनन के लिए अत्यधिक आवश्यक है, जिसमें कई पेड़ शामिल हैं। मधुमक्खियाँ शहद और पराग के लिए चिरों में उड़ती हैं, उनके अनजाने में एक फूल से दूसरे के लिए पराग को ले जाते हैं, जिससे परिवर्तन और बीजनिकासी संभव होती है। वनों में, यह पोलिनेशन प्रक्रिया पेड़ों की पुनर्जनन के लिए महत्वपूर्ण है, इससे जीव विविधता और पारिस्थितिकी संतुलन बनाए रखने में मदद मिलती है।

चित्र 1: जंगल में परागण करती और रस एकत्रित करती मधुमक्खियां

- **वन स्वास्थ्य को बढ़ावा देना:** वन प्रबंधन अभ्यासों में मधुमक्खी पालन को शामिल करने से वन स्वास्थ्य को कई तरीकों से बढ़ावा मिल सकता है। पहले, पोलिनेशन दरों को बढ़ाकर, मधुमक्खी पालन पेड़ जनसंख्या की वृद्धि और पुनर्जनन को बढ़ावा देता है, जिससे अधिक घने और स्वस्थ वन मिलते हैं। इसके अलावा, छिद्र कीट जैसे वन कीटों को रोकने के लिए मधुमक्खी के उपस्थिति का उपयोग किया जा सकता है, जो पेड़ों को बहुत नुकसान पहुंचा सकते हैं। इसके अलावा, मधुमक्खियों को वनीय क्षेत्रों में बीजों के विभिन्न स्रोतों तक पहुंच प्रदान करने के लिए मधुमक्खी को अक्सर वनीय क्षेत्रों में बनाए रखा जाता है, जिससे मधुमक्खियों की कुल स्वास्थ्य और प्रतिरोध क्षमता का समर्थन किया जाता है।
- **सतत वन प्रबंधन:** मधुमक्खी पालन वनीय समुदायों के लिए एक अविश्वसनीय आय का स्रोत प्रदान करता है। वनीय क्षेत्रों में मधुमक्खी की शाखाओं की स्थापना करके, समुदाय अपनी आजीविका में विविधता बढ़ा सकते हैं, जबकि साथ ही वन संरक्षण को भी बढ़ावा देते हैं। इसके

अलावा, शहद उत्पादन और मधुमक्खियों से जुड़े अन्य उत्पाद आय के वैकल्पिक स्रोत के रूप में काम कर सकते हैं, जिससे वनों की कटाई और अन्य संभावित हानिकारक गतिविधियों पर निर्भरता कम हो सकती है।

- **चुनौतियों और संरक्षण प्रयास:** वन यातायात के लिए मधुमक्खी पालन के लाभों के बावजूद, कई चुनौतियां हैं, जिसमें आवास की हानि, कीटनाशक उपयोग और जलवायु परिवर्तन शामिल हैं, जो दुनिया भर में मधुमक्खी जनसंख्या को खतरे में डालते हैं। इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए, मधुमक्खी आवासों को बनाए रखने, परागण-अनुकूल कृषि प्रथाओं को प्रोत्साहित करने और पारिस्थितिक तंत्र के लिए मधुमक्खियों के मूल्य के बारे में ज्ञान बढ़ाने के लिए संरक्षण प्रयास जारी हैं। इसके अलावा, जैविक प्रमाणीकरण और आवास बहाली परियोजनाओं जैसे टिकाऊ मधुमक्खी पालन के तरीकों को बढ़ावा देने के प्रयास, मधुमक्खी आबादी के दीर्घकालिक अस्तित्व और वानिकी में उनके योगदान को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण हैं।
- **शहद का आर्थिक मूल्य:** वन शहद विशेष रूप से ग्रामीण और आदिवासी समुदायों के लिए महत्वपूर्ण आर्थिक मूल्य रखता है, क्योंकि यह न्यूनतम निवेश के साथ आय का एक स्थायी स्रोत प्रदान करता है। इसकी प्राकृतिक उत्पत्ति और अद्वितीय स्वाद प्रोफ़ाइल अक्सर इसे शुद्धता और प्रमाणन जैसे कारकों के आधार पर, ₹1200 से ₹2500 प्रति किलोग्राम तक प्रीमियम कीमतों पर कमांड करने की अनुमति देती है। शहद की निर्यात क्षमता इसके मूल्य को और बढ़ा देती है, क्योंकि कई देश अंतरराष्ट्रीय बाजारों की मांग कर रहे हैं जो जैविक और जंगली-स्रोत वाले उत्पादों को पसंद करते हैं। इसके अतिरिक्त, कच्चे शहद उत्पाद, हर्बल अर्क और प्राकृतिक सौंदर्य प्रसाधन जैसे मूल्यवर्धित उपयोग इसकी बाजार अपील को बढ़ाते हैं। यह न केवल स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं का समर्थन करता है बल्कि वन संरक्षण और पारिस्थितिक पर्यटन को भी बढ़ावा देता है, जो महत्वपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र की रक्षा करने वाली स्थायी प्रथाओं को प्रोत्साहित करता है।
- **वन शहद का महत्व:** वन क्षेत्रों में जंगली फूलों और पेड़ों के रस से मधुमक्खियों द्वारा एकत्र किया गया वन शहद, महत्वपूर्ण पारिस्थितिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मूल्य रखता है। इसके समृद्ध स्वाद, उच्च पोषक तत्व सामग्री और प्राकृतिक शुद्धता के कारण इसे अक्सर पारंपरिक शहद से बेहतर माना जाता है। वन शहद का स्वाद और संरचना जंगल में उपलब्ध पुष्प स्रोतों के आधार पर भिन्न होती है, जिसमें औषधीय पौधे, जड़ी-बूटियाँ और स्थानिक वृक्ष प्रजातियाँ शामिल हो सकती हैं। वन शहद स्थानीय समुदायों, विशेषकर ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों के लिए आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण है। दुनिया के कई हिस्सों में, जंगलों से शहद एकत्र करना एक पारंपरिक गतिविधि है जो आय का एक स्थायी स्रोत प्रदान करती है। उदाहरण के लिए, भारत में, छत्तीसगढ़, झारखंड और पश्चिमी घाट जैसे राज्यों में स्थानीय जनजातियों द्वारा वन शहद एकत्र किया जाता है। यह गतिविधि न केवल आजीविका प्रदान करती है बल्कि टिकाऊ शहद संचयन से संबंधित पारंपरिक ज्ञान और प्रथाओं को भी संरक्षित करती है। बाजार मूल्य के संदर्भ में, वन शहद अक्सर अपने एंटीऑक्सिडेंट, जीवाणुरोधी और विरोधी भड़काऊ गुणों सहित कथित स्वास्थ्य लाभों के कारण प्रीमियम का आदेश देता है। इसने इसे घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय दोनों बाजारों में लोकप्रिय

बना दिया है, जिससे निर्यात के अवसर पैदा हुए हैं। इथियोपिया, भारत और न्यूजीलैंड जैसे देश यूरोप, उत्तरी अमेरिका और मध्य पूर्व के बाजारों में वन शहद का निर्यात करते हैं, जो प्राकृतिक शहद उत्पादों के वैश्विक व्यापार में योगदान करते हैं।

- **मधुमक्खियों और जंगलों का संरक्षण:** एक पारस्परिक आवश्यकता: मधुमक्खियों और जंगलों का संरक्षण पारस्परिक रूप से लाभकारी है, क्योंकि एक की गिरावट दूसरे पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। वनों की कटाई, निवास स्थान की हानि और कीटनाशकों का उपयोग मधुमक्खी आबादी के लिए महत्वपूर्ण खतरा पैदा करता है। जब कृषि, कटाई, या शहरी विकास के लिए जंगलों को साफ़ किया जाता है, तो मधुमक्खियाँ अपने घोंसले के स्थान और अमृत और पराग के स्रोत खो देती हैं, जिससे उनकी संख्या में गिरावट आती है। मधुमक्खियों की आबादी का यह नुकसान, बदले में, वन पौधों के परागण को प्रभावित करता है, जिससे जंगलों के प्राकृतिक पुनर्जनन में बाधा आती है और उनकी जैव विविधता कम हो जाती है। मधुमक्खियों के संरक्षण के प्रयासों में वन आवासों की सुरक्षा और बहाली शामिल है। इसमें पुराने वनों को संरक्षित करना, देशी प्रजातियों को फिर से रोपना और मधुमक्खियों को सुरक्षित चारा क्षेत्र प्रदान करने के लिए कृषि क्षेत्रों के आसपास बफर जोन बनाए रखना शामिल है। स्थायी वन प्रबंधन प्रथाएं, जैसे कि कुछ क्षेत्रों को प्राकृतिक रूप से पुनर्जीवित करने की अनुमति देना और कीटनाशकों के उपयोग को प्रतिबंधित करना, स्वस्थ मधुमक्खी आबादी का समर्थन कर सकता है। समुदाय-आधारित संरक्षण पहल कई क्षेत्रों में प्रभावी साबित हुई हैं। उदाहरण के लिए, वन क्षेत्रों में और उसके आसपास मधुमक्खी पालन को बढ़ावा देने वाले कार्यक्रम स्थानीय समुदायों के लिए वैकल्पिक आजीविका प्रदान करने में मदद करते हैं, जिससे वनों की कटाई का कारण बनने वाली गतिविधियों पर उनकी निर्भरता कम हो जाती है। ये पहल स्थानीय लोगों को जंगलों को मूल्यवान संसाधनों के रूप में देखने के लिए प्रोत्साहित करती हैं जिन्हें संरक्षित किया जाना चाहिए, जिससे संरक्षण की संस्कृति को बढ़ावा मिलता है।

वन क्षेत्रों में मधुमक्खी पालन प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण उपायों का महत्व:

स्थल चयन:

- ऋण और परमिट की प्राप्ति के लिए वनीय अधिकारियों और भूमि के मालिकों के साथ सहयोग करें और वन संरक्षण क्षेत्रों में मधुमक्खी पालन गतिविधियों के नियमों का पालन करें।

पर्यावास संवर्धन:

- वन क्षेत्रों के अंदर और बाहर में मधुमक्खी-मित्र फ्लोरा के विकास को प्रोत्साहित करें, जिसमें वन्यफूल, गूच्छ, और नेक्टार और पराग उत्पादन के लिए जाने जाते हैं।

मधुमक्खी छत्ता प्रबंधन:

- नियमित जांच, रोग निगरानी, और कीट प्रबंधन रणनीतियों जैसी जिम्मेदार बक्स प्रबंधन तकनीकों का अभ्यास करें जो मधुमक्खी स्वास्थ्य और कल्याण को प्राथमिकता देते हैं।

संरक्षण सहयोग:

- वन प्रबंधन में मधुमक्खी पालन को एक साथ स्थायी भूमि उपयोग अभ्यास के रूप में समाहित करने के लिए स्थानीय समुदायों, संरक्षण संगठनों, और वन्यजीवन स्थानकों के साथ लगाव और समर्थन करें।

- वनीय पारिस्थितिकी पर मधुमक्खी पालन गतिविधियों के पर्यावासी प्रभावों का मूल्यांकन करने और सुधार के अवसरों की पहचान के लिए अनुसंधान प्रयासों और मॉनिटरिंग कार्यक्रमों में भाग लें।

निष्कर्ष

मधुमक्खी पालन वनीय क्षेत्रों में वनों को पोलिनेशन को बढ़ावा देने, वन स्वास्थ्य का समर्थन करने और सतत आजीविका को समर्थन करके वनों को बढ़ाने के लिए बड़ी संभावनाएँ उपलब्ध हैं। मधुमक्खियों और वनों के बीच आपसी अपेक्षाओं को मानते हुए, सहभागियों को साथ मिलकर पर्यावरणीय माध्यमों को लाभांकरण के लिए काम करना चाहिए। सहयोगी प्रयासों के माध्यम से, हम मधुमक्खी के शक्ति का उपयोग कर सकते हैं ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए वनों को संरक्षित रखें, जबकि इन मेहनती पोलिनेटर्स द्वारा प्रदान की जाने वाली अमूल्य सेवाओं की रक्षा की जाए। चाहे आप एक अनुभवी मधुमक्खी पालक हों, वन्यजीवन के शौकीन हों, या बस पर्यावरण संरक्षण के प्रति उत्साही हों, वानिकी आंदोलन में मधुमक्खी पालन में शामिल होना एक हरित, अधिक लचीली दुनिया की ओर एक कदम है।

राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है। हृदय की कोई भाषा नहीं है, हृदय – हृदय से बातचीत करता है और हिंदी हृदय की भाषा है । - महात्मा गांधी

चिंता का विषय: भोजन में छिपे कीटनाशक

डॉ- मृणालिनी प्रेरणा, वैज्ञानिक, उष्ट्र स्वास्थ्य अनुसंधान प्रयोगशाला

भाकृअनुप - राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

फलों सब्जियों और अनाजों को कीड़ों खरपतवारों और फफूंद से बचाने के लिए कृषि में बड़े पैमाने पर कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है। वैसे तो ये खाद्य उत्पादन बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं लेकिन कीटनाशक अवशेष युक्त भोजन के सेवन से स्वास्थ्य को संभावित खतरा भी रहता है। आइए भोजन में कीटनाशकों के अवशेषों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों को विस्तार से समझते है।

तीव्र विषाक्तता: यह कम अवधि में उच्च स्तर के संपर्क में आने के कारण होने वाली तत्कालिक स्वास्थ्य समस्याओं को संदर्भित करता है। इसमें कई कीटनाशक निगलने, सांस लेने या त्वचा के माध्यम से अवशोषित होने के बाद विषाक्तता पैदा कर सकते हैं। लक्षणों में आँखों से आंसू आना, खांसी, हृदय की समस्याएं और सांस लेने में कठिनाई शामिल हो सकती है। चक्कर आना, सिरदर्द और गंभीर मामलों में मृत्यु भी शामिल हो सकती है। यह उन लोगों के लिए अधिक होने की संभावना है जो सीधे तौर पर कीटनाशक लगाने के काम में लगे होते हैं या गलती से अधिक मात्रा में सेवन कर लेते हैं।

दीर्घकालिक विषाक्तता: यह समय के साथ कम मात्रा में कीटनाशकों के बार-बार संपर्क में आने से विकसित होने वाली दीर्घकालिक स्वास्थ्य समस्याओं को संदर्भित करता है। ये प्रभाव विशिष्ट कीटनाशक और व्यक्ति की संवेदनशीलता के आधार पर भिन्न हो सकते हैं।

आइए भोजन में कीटनाशकों के अवशेषों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों को विस्तार से समझते हैं:

संभावित स्वास्थ्य समस्याए:

तंत्रिका तंत्र को नुकसान: कुछ कीटनाशक तंत्रिका तंत्र को प्रभावित कर सकते हैं, जिससे याददाश्त कमजोर होना, सीखने में कठिनाई, कंपन और गंभीर मामलों में तंत्रिका संबंधी विकार हो सकते हैं। अंतःस्रावी व्यवधान: कुछ कीटनाशक शरीर में हार्मोन्स की नकल कर सकते हैं, जिससे संभावित रूप से हार्मोनल विकास और कार्य में बाधा उत्पन्न हो सकती है। इसे प्रजनन संबंधी समस्याओं, थायराइड की समस्याओं और यहां तक कि कुछ प्रकार के कैंसर से भी जोड़ा जा सकता है।

कैंसर: कुछ शोधों से पता चलता है कि कुछ खास कीटनाशकों के दीर्घकालिक संपर्क में आने से कुछ प्रकार के कैंसर, जैसे ल्यूकेमिया, लिम्फोमा और प्रोस्टेट कैंसर के जोखिम बढ़ जाते हैं।

अन्य स्वास्थ्य समस्याए: कीटनाशक के संपर्क को सांस की समस्याओं, बच्चों में विकास संबंधी समस्याओं और कमजोर प्रतिरक्षा प्रणाली से भी जोड़ा गया है।

ध्यान देने योग्य बातें

सभी ताजे फलों और सब्जियों को बहते पानी के नीचे अच्छी तरह धोएं और रगड़ें। इससे फलों सब्जियों की सतह से बैक्टीरिया और रसायनों के निशान तथा दरारों से गंदगी हटाने में मदद मिलेगी।

कीटनाशकों को कम करने के लिए जब संभव हो फलों और सब्जियों को छीलें। पत्तेदार सब्जियों की बाहरी पत्तियों को हटा दें। मांस से वसा को हटा दें क्योंकि कुछ कीटनाश कों के अवशेष वसा में एकत्र हो जाते हैं।

खाद्य उत्पादों से कीटनाशक अवशेषों को हटाने के लिए नमक के पानी से धोने से अधिकांश संपर्क कीटनाशक अवशेष निकल जाते हैं जो आमतौर पर सब्जियों और फलों की सतह पर दिखाई देते हैं। अंगूर, सेब, अमरूद आलूबुखारा, आम, आड़ू और नाशपाती जैसे फलों

और टमाटर, बैंगन और भिंडी जैसी फलदार सब्जियों की सतह पर मौजूद कीटनाशकों के अवशेषों को दो से तीन बार धोने की आवश्यकता होती है।

हरी पत्तेदार सब्जियों को अच्छी तरह धोना चाहिए। हरी पत्तेदार सब्जियों से कीटनाशकों के अवशेष सामान्य प्रसंस्करण जैसे धोने या सब्जी को उबलते पानी में पकाने से संतोषजनक ढंग से हट जाते हैं।

माइक्रोग्रीन्स: पोषण का छोटा पॉवरहाउस

उमर इलरॉय उर्सुला डी सूजा
भाकृअनुप - केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान, एला, ओल्ड गोवा – 403402

परिचय

इक्कीसवीं सदी में सूक्ष्म स्तर की सब्ज़ियाँ, जिन्हें सामान्यतः *माइक्रोग्रीन्स* कहा जाता है, उनके उच्च पोषण मूल्य और जैव-सक्रिय यौगिकों के कारण अत्यधिक लोकप्रिय हो गई हैं। माइक्रोग्रीन्स ने वैज्ञानिक और औद्योगिक जगत दोनों का ध्यान आकर्षित किया है, विशेष रूप से उनके *तत्काल खाने योग्य गुण* और *न्यूट्रास्यूटिकल क्षमता* को देखते हुए। ये सब्ज़ियाँ (जो अंकुर या हरे पौधों से भिन्न हैं) तब काटी जाती हैं जब कोटिलेडोनल पत्तियाँ और एक सेट असली पत्तियाँ विकसित हो जाती हैं। स्वास्थ्य जागरूकता के इस युग में, माइक्रोग्रीन्स पोषण की कमी को पूरा करने और स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए आहार में शामिल किए जा रहे हैं। इन्हें "सुपरफूड्स" भी कहा जाता है और इन्हें 7–21 दिनों के बीच काटा जा सकता है। ये अपने विशिष्ट स्वाद, आकर्षक रंग और कोमल बनावट के कारण सलाद, सूप, सैंडविच तथा अन्य व्यंजनों में सजावट के लिए उपयुक्त हैं। इनकी इनडोर खेती संभव है और यह वैश्विक स्तर पर जलवायु-नियंत्रित कृषि की दिशा में बदलाव का प्रतीक हैं। साथ ही, इनकी कम कटाई अवधि और उच्च बाजार मूल्य इन्हें अत्यंत मूल्यवान नियंत्रित पर्यावरण कृषि फसल बनाते हैं।

माइक्रोग्रीन्स, स्प्राउट्स और सब्ज़ियाँ

माइक्रोग्रीन्स अंकुरण के 5 से 21 दिनों के भीतर काटे जाते हैं, जिनकी ऊँचाई सामान्यतः 1–3 इंच होती है। इनमें तना, कोटिलेडोनल पत्तियाँ और दो असली पत्तियाँ शामिल होती हैं। कटाई का समय ही बेबी ग्रीन्स, स्प्राउट्स, सब्ज़ियों और माइक्रोग्रीन्स में अंतर पैदा करता है। सामान्यतः बेबी ग्रीन्स 20–40 दिन बाद काटे जाते हैं, जबकि स्प्राउट्स माइक्रोग्रीन्स से पहले ही काट लिए जाते हैं।

माइक्रोग्रीन्स की किस्में

माइक्रोग्रीन्स विभिन्न प्रकार के बीजों से प्राप्त किए जा सकते हैं। कुछ प्रमुख परिवार हैं:

- **ब्रैसिकेसी परिवार:** ब्रोकोली, फूलगोभी, वॉटरक्रेस, पत्तागोभी, अरुगुला, मूली
- **एस्ट्रेरेसी परिवार:** एंडिव, लेट्यूस, रैडिकियो, चिकोरी
- **एपिएसी परिवार:** गाजर, डिल, अजवाइन, सौंफ
- **अमेरेलिडेसी परिवार:** प्याज, लहसुन, लीक्स
- **अमरांथेसी परिवार:** क्विनोआ, अमरनाथ, पालक, चुकंदर
- **कुकुर्बिटेसी परिवार:** खीरा, लौकी, खरबूजा
- **अनाज व दलहन:** चावल, गेहूँ, जौ, ओट्स, चना, बीन्स, मसूर

इनका स्वाद साधारण से लेकर तीखा, खट्टा या कड़वा तक हो सकता है, लेकिन सामान्यतः यह *गाढ़ा और सघन* होता है।

पोषण और फाइटोकेमिकल घटक

माइक्रोग्रीन्स अपने समृद्ध पोषण और फाइटोकेमिकल संरचना के कारण अत्यधिक मूल्यवान हैं।

- **अमरनाथ, लौकी, खीरा, पालक, मूली:** पोटैशियम, आयरन, जिंक, मैंगनीज, कॉपर; फिनोलिक, फ्लेवोनॉयड्स, एस्कॉर्बिक एसिड
- **ब्रोकोली, मूली, सरसों:** विटामिन E, A, K; खनिज (Ca, Fe, K); कैरोटिनॉयड्स, पॉलीफेनोल्स, एंथोसाइनिन्स
- **बकव्हीट:** बी-कॉम्प्लेक्स विटामिन, विटामिन E, प्रोटीन, स्टार्च, फागोपायरिन्स, कैरोटिनॉयड्स
- **लेट्यूस:** कैल्शियम, मैग्नीशियम, आयरन, मैंगनीज, जिंक, सेलेनियम, मोलिब्डेनम, पॉलीफेनोल्स और क्लोरोफिल
- **मेथी:** पोटैशियम, कैल्शियम, सोडियम, आयरन, कॉपर; फिनोलिक और फ्लेवोनॉयड्स

स्वास्थ्यवर्धक प्रभाव

1. **एंटीऑक्सीडेंट क्षमता:** माइक्रोग्रीन्स पॉलीफेनोल्स और विटामिन जैसे एंटीऑक्सीडेंट्स के वाहक हैं।
2. **हृदय स्वास्थ्य:** लाल पत्तागोभी माइक्रोग्रीन्स कोलेस्ट्रॉल और लिपिड स्तर को नियंत्रित करते हैं।
3. **मधुमेह और मोटापा नियंत्रण:** मेथी माइक्रोग्रीन्स ग्लूकोज़ अवशोषण को बढ़ाते हैं और α-एमाइलेज एंज़ाइम को अवरुद्ध करते हैं।

कैंसर रोधी प्रभाव: ब्रोकोली माइक्रोग्रीन्स में ग्लूकोसिनोलेट्स और पॉलीफेनोल्स कैंसर कोशिकाओं की वृद्धि रोकते हैं।

साहित्यिक खंड

उनके जाने का गम

विश्वजीत प्रजापती
भाकृअनुप. केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान-संस्थान, गोवा

यह कैसी खबर ले आई है जिंदगी आज, थमते नहीं आँसू छुपते नहीं जज्बात,
खबर है कि जिन से मिली सांसे, उन्होंने ली है आखरी सांसे आज।

उनके फटकार में भी होता था प्यार, उनका परिवार ही था उनका संसार,
अपनी खुशियों को कर के दरकिनार, हमारी जिंदद पर देते थे उपहार।

जब गम आया तो माँ के आँचल में छुपे, पर आपके कंधो पर बैठे के हर बाधा करी पार
माँ तो जताती हैं हरदम, पर मुश्किल से दिखता है पापा का प्यार।

कानों में गुंजती है उनकी एक बात, बड़ा हो गया है तो नहीं बैठेगा पापा के पास?
आज जब बैठा हूँ उनके पास, मौन है वह अब नहीं देते सवालों के जवाब।

जिनकी उंगली पकड़े संभले हर बार, विदाई दी है उन्हें रो रो के आज,
अब भी होता है उनके होने का आभास, लगता है अगर गिरे तो वो थामेंगे मेरा हाथ।

जिम्मेदारियों ने भले झुका दिए थे कंधे, पर मुस्कुराहट होती थी चेहरे पर हर दम,
कवि मौन होता है बस कहके यही बात, कैसे कम होगा उनके जाने का गम ।

धन्यवाद !!!!

“बचपन के खयाल - अनसुलझे खयाल”

वैशाली धाँगड़ा

जब जन्म लिया तो लोगों ने कहाँ –“अरे! फौजी के घर तो पहली लडकी जन्म आई है।
पापा होले से मुस्कुराएँ और बोले -"नही मेरे घर साक्षात लक्ष्मी समाई है।"

कई दफा एसा हुआ जब हम बचपन मे सोचते –“भला, समय वह हमें क्यो नहीं दे पाते।"
अब जाकर कहीं जाना-भूखे रहकर भी वो, हम तक हमारी सारी खुशियाँ पहुँचाते थे।"

लडकपन में जब हम खिलौनो से लडते थे लिए आपस मे लडते थे।
हमें क्या पता था, हमारे पिता देश के लिए बाहर दुश्मनो से लडते थे|

जब कभी वो बाहर से घर आते, हम बडी उत्सुकता से पूछते “ पापा, आज आप हमारे लिए क्या लाए ?”
वही जब हम कभी घर वापस आते, तो वह कहते “अरे ! आ मही मेरी बेटी, थक गई होगी मेरी बेटी, भीतर जाकर आप थोडा आराम कर आए|”

महफिलो मे दोस्तो से मुलाकाते होने पर उनकी चर्चा होती “हम सहपरिवार घुमने गए थे बार-बार”
वही मेरे मन में खयाल आता –“उँगलियो पर मै मेरी गीनलूँ – जान जितनिही बार हमने किया है, हमारे पिता के संग एक बार का आहार।

पढाई ना करने पर जब ज़ोरो की डाँट पडी तो लगा,“शायद उन्हे हमारी परवाह नहीं”
पर सच्चाई तो यह थी, जो खुद बचपन मे कभी ना पढ सका, आज मेहनत कर रहा था वो, भुखे रहकर भी कही|

सोचा था, शादी में देखूँगी ,पापा के आँखो मे शायद खुशी के आँसू| मगर किस्मत ने लिखा एसा अध्याय,
पहले हि छोड़ गए हमे वो, देकर जीवन में हमे अनंतकाल के आँसू

जिस उमर में उठनी थी उनके बेटी की डोली, सजधज के साथ।
उस उमर में उठा उनका जनाजा उनके सहकर्मियो के हाथ|
सहकर्मि बोले, “मित्र को आखिरी सलामी है हमारी" एसे ही विदा हूँए मेरे पापा,
और बस हाथ रह गई यादे तुम्हारी,

कभी चाहा था, सेवानिवृत्ती में संग बैठकर हँसते हुए रोटी तोड़ेंगे
मगर किस्मत के खेल से अनजान मुझे क्या पता था।
अब पतृपक्ष में हि हर साल बस भोजन जोडेंगे।2

पापा, आप गए - मगर सिख आपकी हमेशा राह दिखाती है,
हर धडकन मे आपकी हि याद मेरी शक्ति बन जाती है
आपको आखिरी सलामी है मेरी, यही है बस मेरी ईश्वर से असदास
आप हि थे, आप हि हो - मेरी दुनिया और मेरा विश्वास।

जिस देश को अपनी भाषा और साहित्य के गर्व का अनुभव नहीं है, वह उन्नत नहीं हो सकता । - डॉ राजेन्द्र प्रसाद

भारत का संविधान, भारत की आत्मा

आतिल अमन
भाकृअनुप.-केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान, गोवा

भारत का संविधान केवल एक कानूनी दस्तावेज नहीं, बल्कि भारतीय सभ्यता, संस्कृति, मूल्य, आकांक्षाओं और विविधता का समग्र प्रतिबिंब है। यह राष्ट्र की आत्मा का आईना है, जो यह बताता है कि भारत किस सिद्धांत पर खड़ा है और किस दिशा में आगे बढ़ना चाहता है। विभिन्न जाति, धर्म, भाषा, संस्कृति और परंपरा वाले करोड़ों भारतीयों को एक सूत्र में पिरोने वाली शक्ति यदि कोई है, तो वह है - **भारत का संविधान**। इसलिए कहना उचित है कि *"भारत का संविधान, भारत की आत्मा"*।

परिचय: संविधान का महत्व

संविधान किसी भी राष्ट्र की मूल पहचान होता है। यह राष्ट्रीय जीवन का मार्गदर्शक, नागरिकों के अधिकारों का संरक्षक और शासन व्यवस्था का आधार होता है। 26 जनवरी 1950 को लागू हुए भारतीय संविधान ने भारत को एक संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक गणराज्य घोषित किया, और यहीं से भारत का आधुनिक लोकतांत्रिक सफर प्रारंभ हुआ।

संविधान सभा में 2 वर्ष 11 महीने और 18 दिनों की गहन चर्चा के बाद निर्मित यह दस्तावेज भारतीय बुद्धिमत्ता, अनुभव, संघर्ष और आशाओं का परिणाम है।

भारत का संविधान: विविधता में एकता का आधार

भारत एक विशाल देश है जहाँ:

- 22 अनुसूचित भाषाएँ
- हजारों बोलियाँ
- अनेक धर्म और पंथ
- विविध सामाजिक परंपराएँ
- अनगिनत सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ

एक साथ मौजूद हैं। ऐसे देश को एकीकृत, संतुलित और स्थिर बनाए रखने का कार्य संविधान करता है। इसमें हर समुदाय की भावनाओं, अधिकारों और अस्तित्व को समान सम्मान दिया गया है।

यह किसी एक वर्ग का दस्तावेज नहीं, बल्कि पूरे राष्ट्र की साझा धरोहर है।

प्रस्तावना: भारतीय आत्मा की उद्घोषणा

संविधान की प्रस्तावना ही यह स्पष्ट कर देती है कि भारत की आत्मा किन मूल्यों पर आधारित है:

- **न्याय** — सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक
- **स्वतंत्रता** — विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना
- **समानता** — अवसरों और अधिकारों की
- **बंधुत्व** — व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्रीय एकता

ये मूल्य भारत की प्राचीन संस्कृति, धर्म, दर्शन और स्वतंत्रता संग्राम की विरासत से उत्पन्न हुए हैं। प्रस्तावना हमारे संविधान की आत्मा है, और यही आत्मा भारतीय लोकतंत्र को दिशा देती है।

संविधान में निहित भारतीय संस्कृति

भारत का संविधान पश्चिमी या विदेशी विचारों की नकल भर नहीं है। यह भारतीय संस्कृति का जीवंत रूप है।

1. **सहिष्णुता और विविधता का सम्मान**

भारतीय संस्कृति का मूल है —*"एकम् सद्विप्रा बहुधा वदन्ति"*। संविधान इसी विचार को अपनाते हुए सभी धर्मों और संस्कृतियों को समान सम्मान देता है।

2. **लोक कल्याण की परंपरा**

भारतीय शासन दर्शन के सिद्धांत "जनता जनार्दन" पर आधारित है। संविधान में कल्याणकारी राज्य)Welfare State) की परिकल्पना इसी विचार का विस्तार है।

3**. समानता का आधार**

"सर्वे भवन्तु सुखिनः "- यह भारतीय दृष्टि संविधान के समानता के सिद्धांत में दिखाई देती है।

4. **धर्मनिरपेक्षता**

धर्मनिरपेक्षता भारत का सांस्कृतिक मूल्य है, जहाँ राज्य किसी भी धर्म का पक्ष नहीं लेता। यह भारतीय समाज की समन्वयकारी प्रकृति का प्रतीक है।

नागरिकों के अधिकार: आत्मा का संरक्षण

संविधान ने नागरिकों को छह मूल अधिकार प्रदान किए हैं—

- समानता का अधिकार
- स्वतंत्रता का अधिकार
- शोषण के विरुद्ध अधिकार
- धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार
- सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अधिकार
- संवैधानिक उपचार का अधिकार

ये अधिकार न केवल व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करते हैं, बल्कि हर भारतीय की आत्मसम्मान को भी सुरक्षित रखते हैं।

डॉ भीमराव आंबेडकर ने कहा था, - **"संविधान केवल राजनीतिक अधिकार नहीं देता, बल्कि सामाजिक क्रांति का मार्ग भी प्रशस्त करता है।"**यही भारत की आत्मा है।

कर्तव्य: आत्मा की रक्षा का दायित्व

1976 में संविधान में नागरिकों के मूल कर्तव्यों को जोड़ा गया। यह संदेश देता है कि अधिकारों के साथ कर्तव्यों का पालन भी आवश्यक है। कर्तव्य बताए गए हैं ताकि नागरिक अनुशासित, उत्तरदायी और राष्ट्रहित में समर्पित रहें।

इससे स्पष्ट होता है कि संविधान केवल अधिकारों का वाहक नहीं, बल्कि कर्तव्यपूर्ण जीवन की प्रेरणा भी देता है। यही संतुलन भारत की आत्मा को मजबूती देता है।

लोकतांत्रिक व्यवस्था: भारतीय आत्मा का आधार

भारतीय लोकतंत्र दुनिया के सबसे सफल लोकतंत्रों में से एक है। यहाँ -

- जनता सरकार बनाती है
- लोकहित सर्वोपरि है

- हर नागरिक को समान मतदान अधिकार प्राप्त है
- सत्ता परिवर्तन शांति से होता है

संविधान ने शासन को *जनता के प्रति उत्तरदायी* बनाया। लोकतंत्र हमारी आत्मा का वह स्वर है, जो प्राचीन सभाओं, पंचायतों और जनपरिषदों से चला आ रहा है।

न्यायपालिका: संविधान का संरक्षक

भारत की सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय संविधान की रक्षा करते हैं।
वे यह सुनिश्चित करते हैं कि -

- सरकार संविधान से बाहर जाकर काम न करे
- नागरिकों के अधिकारों का हनन न हो
- न्याय सबको समान रूप से मिले

न्यायपालिका संविधान की आत्मा को जीवित रखती है।

समाज के कमजोर वर्गों का संरक्षण

भारतीय संविधान समाज के सबसे कमजोर वर्गों

- अनुसूचित जाति
- अनुसूचित जनजाति
- अन्य पिछड़ा वर्ग
- महिलाएँ
- बच्चे

के लिए विशेष प्रावधान करता है।

आरक्षण नीति, शिक्षा में अवसर, सामाजिक न्याय, और समतामूलक व्यवस्था का निर्माण हमारे संविधान की सामाजिक आत्मा है।

संविधान: परिवर्तनशील आत्मा

भारतका संविधान कठोर भी है और लचीला भी। समय के साथ समाज बदलता है, इसलिए संविधान में संशोधन की व्यवस्था दी गई है।

100 से अधिक संशोधनों के माध्यम से यह संविधान आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप ढलता गया है -
यह परिवर्तनशीलता ही उसकी जीवंत आत्मा का संकेत है।

संविधान: एक साझा राष्ट्रीय धर्म

भारत में अनेक धर्म हैं, परंतु **संविधान सभी का साझा राष्ट्रीय धर्म** है। इसका पालन करना, इसकी रक्षा करना और इसके प्रतिनिष्ठावान रहना प्रत्येक भारतीय का नैतिक और राष्ट्रीय दायित्व है।

संविधान राष्ट्रीय एकता का सेतु है, जो व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठकर राष्ट्रीय हितों को सर्वोच्च मानता है।

भारत का संविधान केवल शासन की रूपरेखा नहीं, बल्कि भारत की आत्मा, पहचान और भविष्य की दिशा है। यह वह प्रकाश स्तंभ है, जिसने भारत को एक स्थिर, समावेशी, प्रगतिशील और लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में खड़ा किया।

संविधान हमें यह सिखाता है कि -

- न्याय ही राष्ट्र की नींव है
- स्वतंत्रता ही प्रगति का मार्ग है

- समानता ही समाज की मजबूती है
- बंधुत्व ही भारत की आत्मा है

अतः "भारत का संविधान, भारत की आत्मा" कहना पूरी तरह उचित है, क्योंकि यही वह मूल दस्तावेज़ है जो करोड़ों भारतीयों के सपनों को दिशा देता है और राष्ट्र को एक अद्वितीय लोकतांत्रिक शक्ति के रूप में स्थापित करता है।

भलाई का जिसमें है विधान, वही है भारतीय संविधान।

- डॉ बी आर आंबेडकर

कार्यालयों में राजभाषा हिंदी: एआई (AI) और आईटी (IT) उपकरणों की भूमिका

डॉ. विनोद आनंदा उबरहंडे, सुश्री. श्रेया बर्वे एवं श्री. आतिल अमन
भा.कृ.अनु.सं. - केंद्रीय तटीय कृषी अनुसंधान संस्थान, गोवा

भारत जैसे बहुभाषी देश में प्रशासनिक एकरूपता और प्रभावी संप्रेषण के लिए हिंदी को संविधान द्वारा राजभाषा का दर्जा प्रदान किया गया है। राजभाषा नीति का उद्देश्य किसी भाषा को थोपना नहीं, बल्कि प्रशासनिक कार्यों में भारतीय भाषाओं के संतुलित और प्रगतिशील उपयोग को बढ़ावा देना है। सरकारी एवं अर्ध-सरकारी संस्थानों में हिंदी का प्रयोग केवल औपचारिकता नहीं, बल्कि जनसंपर्क, पारदर्शिता और सहभागिता का माध्यम है। गैर-हिंदी भाषी कर्मचारियों की चुनौतियाँ कार्यालयों में कार्यरत अनेक कर्मचारी ऐसे राज्यों से आते हैं जहाँ हिंदी मातृभाषा नहीं है। उनके सामने प्रायः निम्न कठिनाइयाँ आती हैं:

- हिंदी टाइपिंग में असुविधा
- शुद्ध एवं औपचारिक शब्दावली का अभाव
- अनुवाद में समय की अधिक आवश्यकता
- आत्मविश्वास की कमी

परंतु डिजिटल युग में ये बाधाएँ स्थायी नहीं हैं। आज एआई (Artificial Intelligence) और आईटी (Information Technology) उपकरणों ने हिंदी को सरल, सुलभ और व्यावहारिक बना दिया है।

कार्यालय कार्यों में हिंदी का उपयोग क्यों आवश्यक है?

राजभाषा नीति के अनुसार हिंदी का प्रोत्साहन: सरकारी कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देना। राजभाषा नीति का अनिवार्य भाग है। यह संवैधानिक दायित्व भी है और प्रशासनिक उत्तरदायित्व भी।

हिंदी भाषी जनता से संवाद में सहूलियत: भारत की बड़ी जनसंख्या हिंदी समझती है। हिंदी में पत्राचार एवं

सूचना प्रसार से जनता के साथ संवाद सरल और प्रभावी होता है।

भाषाई विविधता और समावेशिता को बढ़ावा: हिंदी का उपयोग अन्य भारतीय भाषाओं के साथ संतुलन

स्थापित करता है और कार्यस्थल पर भाषाई समावेशिता को प्रोत्साहित करता है।

इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए, राजभाषा नीति के अनुसार हिंदी के प्रयोग हेतु प्रोत्साहन देने हेतू हम उपयोगी आईटी एवं एआई उपकरणों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

कार्यालय कार्यों में हिंदी के लिए उपयोगी डिजिटल एवं एआई उपकरण

1. वॉयस टाइपिंग (बोलकर हिंदी टाइप करें)

गुगल अप्लिकेशन: Live Transcribe & notification

उपयोग: हिंदी में बोलें और वह स्वतः टेक्स्ट में परिवर्तित हो जाएगा।

गूगल डॉक्स में (Tools ⟶ Voice Typing)

मोबाइल कीबोर्ड में वॉयस इनपुट सुविधा
प्रयोग: पत्र या रिपोर्ट हिंदी में बोलकर तैयार करना
जिनकी टाइपिंग कमजोर है, उनके लिए अत्यंत सहायक उदाहरण: "आज मौसम अच्छा है" बोलने पर वही वाक्य स्क्रीन पर लिखा जाएगा।

2. गूगल इनपुट टूल्स (Google Input Tools)
विशेषताएँ: अंग्रेज़ी कीबोर्ड से हिंदी में टाइपिंग (Transliteration)
ऑनलाईन वेबसाइट पे टाइपिंग कर सकते है।

इसका १००% आसानी से उपयोग करना है तो इसे हमेशा के लिये कम्प्युटर मे डाउनलोड करके रख सकते है । Search: "Google Input Tools Hindi – Download and install"
https://drive.google.com/file/d/1d2feyQ02rrfeZ3aFoSBPY5fkwZR7Xdng/edit

प्रयोग: ईमेल हिंदी में लिखना
एमएस वर्ड में हिंदी दस्तावेज तैयार करना
ऑनलाइन फॉर्म्स में हिंदी जानकारी भरना
उदाहरण: "Bharat ek mahan desh hai" टाइप करने पर ⟶ भारत एक महान देश है।

3. गूगल ट्रांसलेट (Google Translate)
उपयोग: अंग्रेज़ी ↔ हिंदी त्वरित अनुवाद
वेबसाइट: https://translate.google.com
प्रयोग: रिपोर्ट या संवाद का प्रारंभिक अनुवाद तैयार करना
हिंदी सामग्री को शीघ्र समझना
उदाहरण: "Annual Report" ⟶ "वार्षिक रिपोर्ट"

4. नई पीढ़ी के एआई (AI) उपकरण
नई पीढ़ी के एआई उपकरण जैसे ChatGPT, Gemini, Microsoft Copilot तथा Bhashini कार्यालयीन कार्यों में हिंदी के प्रभावी उपयोग के लिए अत्यंत उपयोगी डिजिटल सहयोगी सिद्ध हो रहे हैं। ये उपकरण आधिकारिक पत्रों, नोटशीट, कार्यालय आदेश और भाषणों का मसौदा तैयार करने, सरल भाषा को शुद्ध राजभाषा शैली में परिवर्तित करने, अंग्रेज़ी दस्तावेजों का सटीक हिंदी सारांश बनाने, व्याकरण एवं वाक्य संरचना सुधारने तथा वाणी को पाठ (Speech-to-Text) में बदलने जैसी सुविधाएँ प्रदान करते हैं। विशेष रूप से MS Office जैसे नियमित कार्यालयीन सॉफ्टवेयर के साथ एकीकृत एआई सहायक कार्य को और अधिक तेज, व्यवस्थित एवं पेशेवर बनाते हैं। इन डिजिटल साधनों के विवेकपूर्ण उपयोग से गैर-हिंदी भाषी कर्मचारी भी आत्मविश्वास के साथ हिंदी में कार्य कर सकते हैं, जिससे राजभाषा नीति के प्रभावी क्रियान्वयन और प्रशासनिक कार्यों में हिंदी के स्वाभाविक विस्तार को नई गति मिलती है।

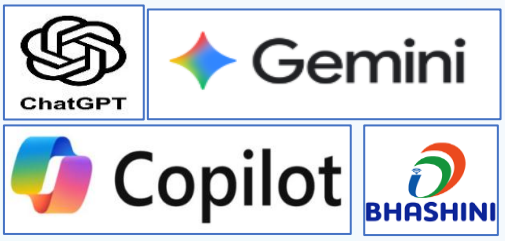

ये उपकरण कर्मचारियों के लिए "डिजिटल सहायक" की तरह कार्य करते हैं और हिंदी में आत्मविश्वास बढ़ाते हैं।

सावधानियाँ

इन सभी आईटी/एआई उपकरणों का प्रयोग करते समय:

- संवेदनशील एवं गोपनीय दस्तावेजों की जानकारी साझा करने से बचें
- अंतिम मसौदे की मानवीय समीक्षा अवश्य करें
- राजभाषा शब्दावली के मानक स्रोतों का भी संदर्भ लें

डिजिटल युग में हिंदी का प्रयोग अब कठिन नहीं रहा। एआई एवं आईटी उपकरणों ने हिंदी टाइपिंग, अनुवाद और प्रारूपण को सरल, तेज और व्यावहारिक बना दिया है। राजभाषा नीति के प्रभावी क्रियान्वयन, जनता से सुगम संवाद और कार्यस्थल पर भाषाई समावेशिता के लिए इन उपकरणों का उपयोग अत्यंत आवश्यक है। यदि प्रत्येक कर्मचारी प्रतिदिन कुछ मिनट हिंदी में कार्य करने का अभ्यास करे और उपलब्ध डिजिटल साधनों का उपयोग करे, तो कार्यालयों में हिंदी का प्रयोग स्वाभाविक रूप से बढ़ेगा। राजभाषा केवल नियम नहीं, बल्कि प्रशासन और जनता के बीच सेतु है;और डिजिटल तकनीक उस सेतु को और अधिक मजबूत बना रही है।

हिंदी हमारे देश और भाषा की प्रभावशाली विरासत है। - माखनलाल चतुर्वेदी

Field Day

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद